रसमालिका

15309

15309

❀ श्रीसीतारामचन्द्राभ्यांनमः ❀

श्री रसमालिका

प्रणेता:—

श्रीकरुणासिन्धु श्रीस्वामी रामचरणदासजी महाराज

15309
अयोध्या

टिप्पणी लेखक:—

शत्रुघ्न शरण

शारदीय पूर्णिमा सं० २०२१

प्रथमवार ५००] [मू० केवल प्रेम

मुद्रक:—श्रीहनुमत् प्रेस, श्रीअयोध्याजी।

॥ श्रीसीतारामचन्द्राभ्यांनमः ॥

श्री रस मालिका

प्रणेता:—

श्रीकरुणासिन्धु श्रीस्वामी रामचरणदासजी महाराज

टिप्पणी लेखक:—

शत्रुहन शरण

शारदीय पूर्णिमा सं० २०२१

प्रथमवार ५००] [मू० केवल प्रेम

मुद्रक:—श्रीहनुमत प्रेस, श्रीअयोध्याजी।

❀ श्रीसरयू पुलिन विहारिणी विहारिणौ विजयते ❀

॥ प्राक्कथन ॥

परम रसिकाचार्य श्री स्वामी करुणासिन्धुजी महाराज की प्रतिभामयी लेखनी से प्रस्तुत यह रसमालिका नामक दिव्य ग्रन्थ-रत्न रसिक जनों के हृदय को सरस भाव कुसुमों से समलंकृत करने वाली हार है। इसमें १५ अवकाश हैं।

प्रथम अवकाश में मंगलाचरण के बाद श्री शेष-वेद सम्वाद उपस्थित किया गया है। एक बार चारो वेद ब्रह्मलोक में ब्रह्म निरूपण कर रहे थे। ब्रह्म के सगुण-निर्गुण स्वरूपों का निर्णय करना था। जब ये पारस्परिक विचार विमर्श से किसी संतोष जनक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके, तो अथर्वण के प्रस्ताव करने पर चारो श्री शेष जी के समीप पहुँचे। उनके समक्ष परम धाम, परात्पर रूप, सर्वोपरि मंत्र, सर्वश्रेष्ठ रस तथा माया, जीव, सगुण एवं निर्गुण ब्रह्म तथा शब्द स्वरूप विषयक नव प्रश्न रक्खे गये।

श्री शेष जी ने सर्व प्रथम परात्पर धाम का निरूपण इस प्रकार प्रारम्भ किया कि पृथ्वी के ऊपर क्रमशः महर्लोक, जनलोक. तपलोक, सत्य लोक, कौमार लोक, उमा लोक तथा शिव लोक हैं। उसके ऊपर पृथ्वी, जल, अग्नि, पवन, आकाश, अहंकार और मूलाप्रकृति-इन सात तत्त्वों के सप्तावरण हैं।

महर्षि वाल्मीकि … अयोध्या

उसके ऊपर से त्रिपाद विभूति के अविनाशी लोक प्रारम्भ होते हैं।

सर्व प्रथम महाविष्णु लोक है। इस दिव्य धाम का संक्षिप्त आभास झलकाते हुये श्री महाविष्णु भगवान् के स्वरूप एवं ऐश्वर्य का यत्किंचित वर्णन किया गया है।

दूसरे अवकाश में श्री महाशंभु भगवान् के तेजोमय योगेश्वर लोक एवं वासुदेव लोक की चर्चा है। श्री वासुदेव-लोक में सायुज्य मोक्ष प्राप्त ऐसे ज्ञानी पहुँचते हैं, जो समत्व भाव से चराचर विश्व को प्रभुमय देखते हुए तीव्र वैराग्य पूर्वर भजन कर चुके हों।

तीसरे अवकाश में नित्य वृन्दावन का वर्णन है। श्री वृन्दावन विहारीलालजू के सखा, गोपङ्गना, गो तथा श्रीयमुना-जी की संक्षिप्त चर्चा करते हुये वहां की होली, रास एव जल-क्रीड़ा का सरस चित्रण किया गया है।

चौथे अवकाश में परात्पर धाम श्री साकेत का परत्व लक्षित कराया गया है।

पांचवें अवकाश में श्री साकेत धाम का वर्णन करते हुए उस विशाल कल्पवृक्ष का स्वरूप निरूपण है, जिसके नीचे रत्न मंडप है। मंडप में वेदिका है। उस पर सिंहासन के मध्य लक्ष दल कमल पर विराजमान श्री लड़ैती लाल जू हैं। यहां श्री मिथिलेश राजदुलारी एवं श्री कौशलेन्द्र कुमार जू का बड़ा ही हृदयग्राही नख-शिख वर्णन है।

छठे अवकाश में श्रीयुगल मनभावन जू के लिये नित्य-निकुञ्ज निवासिनी सखियों की सेवा सौज का वर्णन करते हुये,

स्थावर जंगम प्राणियों की प्रेम परिपूरित सेवा का मार्मिक चित्रांकण किया गया है। फाग क्रीड़ा एवं रास का गोपनीय वर्णन रसिकों के लिये नित्य भावनीय हैं।

सातवें अवकाश में श्रीजानकी रमण जू के रास, जल-क्रीड़ा एवं हिंडोल विहार का सरस चित्रण है।

आठवें अवकाश में श्रीजानकी प्राण संजीवन कौशलेन्द्र नन्दन जू के विहार चरित्र को अपार बताते हुए इस ग्रंथ के रसमय प्रसंग का उपसंहार किया गया है।

नवें अवकाश में सर्वोत्कृष्ट मंत्र स्वरूप श्रीराम नाम के महत्व परत्व का शास्त्रीय विवेचन है।

दशवें अवकाश में माया स्वरूप का निरूपण है। जीव का स्वरूप बताते हुये मन और बुद्धि के सम्वाद रूप में जीव की अचेतावस्था एवं जागृतावस्था की द्विधा स्थिति बताई गई है। एक तो ब्रह्मज्ञानियों को, दूसरी उपासकों की।

ग्यारहवें अवकाश में निरक्षर अव्यक्त ब्रह्म का वर्णन है तथा बारहवें अवकाश में कर्मकांड, योग, ब्रह्मज्ञान एवं भक्ति विषयक चार प्रकार की आचार्य वाणियों का उल्लेख है।

तेरहवें अवकाश में योग, वैराग्य और ज्ञान-विज्ञान का स्वरूप बताते हुये भक्ति महारानी के श्रृङ्गार का ललित वर्णन किया गया हैं। अन्त में श्रीराम कथा वाले सत्संग को सभी साधनों का राजा बताकर उनके राज्यांगों का भी निरूपण किया गया है।

चौदहवें अवकाश में वेदों ने श्री शेष जी की स्तुति

करते हुये एकपाद विभूति अन्तर्गत सप्तावरण की जिज्ञासा की है। अन्त से परितृप्त होकर श्रोता वक्ता विदा होकर अपने अपने स्थल को जाते हैं।

अन्तिम अवकाश में सभी सम्बादों के उपसंहार करते हुये सत्संग का प्रभाव सर्वोपरि बताकर ग्रंथ समाप्त किया गया है।

इस ग्रन्थ रत्न के गूढ़ाशयों को समझने में मुझे रसिक कुल भूषण पूज्यपाद मधुकर श्री स्वामी सियाशरणजी महाराज रचित टीका से बड़ी सहायता मिली है। यह टीका मुझे वैदेही वल्लभ कुंज वाले श्री किशोरीशरणजी मधुकरिया के सौजन्य से प्राप्त हुई थी। अतः मैं इनका कृतज्ञ हूं।

जिन उदारचेता सज्जन के गुप्त द्रव्य दान से टिप्पणी सहित यह ग्रंथ प्रकाशित हो रहा है, वे अपने सद्भावग्राही परमप्रेमास्पद इष्ट युगल प्राणधन जू से सम्यक प्रकारेण पुरस्कृत होंगे ही, मेरा कोरा धन्यवाद प्रदान उनके लिये अपर्याप्त है।

श्रीस्वामी करुणासिन्धु जी महाराज की जीवनी लिखने में मुझे भी रहस्य-प्रमोद-भवन, जयपुर मंदिर के दोनों वर्त्तमान बड़े छोटे श्रीमान् महंथ जी से पर्याप्त सामग्री मिली है। अतः मैं आप युगल गुरुबन्धु का आभारी हूँ।

मेरी अल्पज्ञता के कारण टिप्पणी करने में भूलें हो गई होंगी तथा मेरीही लापरवाहीसे प्रूफ संशोधन विषयक त्रुटियां भी रह गई हैं। क्षमाशील विज्ञ पाठक गण सुधार कर पढ़ेंगे।

रसिक जनों का लघु अनुचरः—

शत्रुहनशरण (बिरौली वाला)

श्री अवध धाम भूषण
रसिक वंशावतंश महर्षि कल्प अनन्त श्री
सम्पन्न स्वामी रामकिशोर शरण-
जी महाराज हनुमन्निवास
(कोठे वाले सरकार)

परमाराध्य गुरुवर्य,

आप ही के चरण नख चन्द्र की कृपाकिरण
से आलोकित इस ग्रन्थ टिप्पणी की
भावावली आपके ही रसज्ञ कर
कंज में सादर समर्पित है ।

आप ही का चरणानुजीवी लघु किंकरः—

शत्रुहन शरण

ग्रन्थकार का जीवन परिचय।

रामायणे कृता टीका येन श्री तुलसी कृते।
श्री रामचरणाख्यं तं वन्दे परमं गुरुम्। १॥
मुमुक्षूणां कोटयश्च ह्यंकिता राम मुद्रया।
येन श्री रामचरणं तं वन्दे परमं गुरुम् ॥२॥
न्याय वेदान्त कुशलं कविं बुद्धिमताम्वरम्।
श्री रामचरणाख्यं तं वन्दे परमं गुरुम् ॥३॥
ज्ञान वैराग्य भक्तीनां भवनं रसिकं परम्।
श्री रामचरणाख्यं तं वन्दे परमं गुरुम् ॥४॥
श्री रामचरणाभ्यां चावतारो यस्य जायते।
नाम्नापि रामचरणस्तं वन्दे परमं गुरुम् ॥५॥

छप्पय—

श्री रामचरण सियराम रसिक रसिकन में आगर।
बिविध ग्रन्थ भरि दिये सरस शृङ्गार उजागर॥
श्री तुलसी शृङ्गार गुप्त रस दास्य बखानी।
यही चोट रहि गई प्राप्ति में रस बिलगानी॥
सोई आनि रस वपु धर्‌यो अग्र स्वामि के पथ लहे।
टीका रचि निज ग्रन्थ के प्रगट रास रस निर्वहे॥

हमारे चरित नायक रसिकाचार्य श्री स्वामी रामचरण-दास (करुणासिन्धु) जी का मंगलमय प्रादुर्भाव उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जिलान्तर्गत गोपालपुर नामक सौभाग्यशाली ग्राम में संवत् १९३० वैशाख शुक्ला चतुर्दशी के दिन हुआ था।

परम कुलीन सरयूपारीण ब्राह्मण रत्न पं० श्री जानकी-वर त्रिपाठी एवं उनकी धर्म पत्नी श्रीमती पद्मपला जी को आपके पितृ-मातृ पद का गौरव प्राप्त हुआ। घर पर सामान्य शिक्षा प्राप्त कर आप प्रतापगढ़ के राजा बैरीशाल के यहां कोषाध्यक्ष पद पर नौकरी करते रहे। एक दिन आप श्री राम-चरित मानस जी के पाठ में तन्मय हो जाने के कारण अपने दफ्तर में नियमित समय से अधिक विलम्ब करके पहुंचे। तब तक अपने भक्तों के योगक्षेम वहन करने वाले आपके प्रियतम इष्ट श्री जानकी रमणजू आपही के मंगलमय विग्रह धारण कर आपके सारे कार्यों को सम्हाल कर एवं आवश्यक कागज पत्रों पर आपही के जैसा हस्ताक्षर का जाल करके अन्तर्ध्यान हो चुके थे। भेद जान लेने पर अपने प्रियतम प्रेमास्पद की कृपा की वार-वार वलैया लेते हुये आप नौकरी त्याग कर सीधे श्री अवध चले आये।

विन्दुकाचार्य श्री स्वामी रामप्रसाद जी महाराज के शिष्य श्री स्वामी रघुनाथ प्रसाद जी से आपने पंचसंस्कार पूर्वक दीक्षा प्राप्त की। कुछ दिनों के बाद जब आपके गृह-कुटुम्बियों को आपके श्री अवध वास का पता लगा, तो वे यहां आकर आपको गृह लौटाने के लिये रो-रो कर श्री दीनबन्धु

जी से अनुनय विनय करने लगे। श्री महाराज ने जब उन लोगों के अनुरोध करने पर आपको घर जाकर गृहस्थ जीवन यापन पूर्वक भजन करने की अनुमति दे दी, तब तो आप बड़े धर्म संकट में पड़े। इस अवसर पर आपको एक युक्ति सूझ गई। संतों की पंक्ति उठ जानेपर, उन कुटुम्बियों को दिखा दिखाकर आप संतों की जूठन पाने लगे। उस समय के जाति-अभिमानी परिजन जाति भ्रष्ट समझकर आपको छोड़ कर चले गये। संतों के शीथ-प्रसाद के फलस्वरूप सांसारिक सम्बन्धों से छुटकारा देखकर, उसी दिन से आपने संत-शीथ ग्रहण का व्रत ले लिये, जिसे आजीवन निवाहा।

कुछ काल के उपरांत अपने परम गुरु श्री विन्दुकाचार्य जी के साथ आप श्री चित्रकूट आये। यहां आपने श्री दीनबन्धु से मधुर उपासना एवं मानसिक सेवा प्राप्त की। तत्कालीन रसिक संतों के समागम से आपकी यह भावना और भी प्रगाढ़ हुई और रहस्य विषय की विशेष जानकारी के लिये श्री महाराज से आज्ञा मांग कर आप रैवासे पधारे। वहां रस साहित्य का अनुशीलन कर, आप श्री मिथिला गये तथा पुनः लौट कर श्री अवध आ गये।

श्री अवध आकर श्री जानकीघाट पर आपने श्री चारुशीला बाग एवं श्री चारुशिला भवन का निर्माण कराया तथा श्री जानकी रसिक सरकार की सेवा के साथ साथ संतों की आदर्श सेवा करते हुये निरंतर मानसी भाव में निमग्न रहते हुये यहीं सारी आयु बिताई।

यहीं पर आपने २४ ग्रन्थों की रचना की जिनके नाम हैं:-
१- अमृत खंड। - शत पचासिका। ३- रस मालिका। ४-राम-पदावली। ५- सियाराम रस मंजरी। ६-सेवा विधि। ७-छप्पय रामायण। ८- जपमाल संग्रह। ९- चरण चिह्न। १०- कवितावली। ११-दृष्टांत बोधिका। १२- तीर्थ यात्रा। १३- विरह शतक १४- वैराग्य शतक। १५- नाम शतक। १६- उपासना शतक। १७- विवेक शतक। १८- पिंगल। १९- अष्टयाम सेवा विधि। २०- काव्य श्रृङ्गार। २१- झूलन। २२- कौशलेन्द्र रहस्य। २३- श्री मानस टीका। २४- राम नवरत्न सार संग्रह।

एक समय लखनऊ का नवाब आसफुद्दौला आपकी भजन भावना शीलस्वभाव की ख्याति सुनकर आपके दर्शनार्थ श्री अवध आया और आपके दर्शनों से प्रभावित होकर श्रृङ्गार हाट से लेकर श्री जानकीघाट तक की जमीन एवं कई गाँव आपकी सेवा में समर्पण किये।

आपकी उदार व्यवस्था के अनुसार स्थान निवासी संतों को पवा कर भोग लगा हुआ पर्याप्त सामान सर घर में रखा जाता था। आगंतुक संतों को छूट थी, जब चाहें उसमें प्रवेश कर अपने हाथों से जितना चाहें निकाल कर पा लें। इस सुविधा को पाकर वहां आस पास में भजनानन्दी संतों का खाशा टोला बस गया। दीनों की दुःख वार्ता सुनकर आप का हृदय करुणार्द्र हो जाता था। आपने सेवकों का हिदायत कर रखी थी कि कोई दीन दुखी आरत मुझसे मिलने आवें तो उन्हें भोजन वस्त्रादि आवश्यक माँग पूरी करके तब मेरे

सामने उपस्थित करना। किसी रोगी दुखी संत की खबर मिलने पर आप स्वयं उनकी सेवा में पहुंच जाते थे और कष्ट निवारण पर्यन्त सब प्रकार से उनकी सुश्रुषा करते थे। इन्हीं सब कारणों से तत्कालीन सभी संत आपको श्री करुणा-सिन्धु नाम से पुकारने लगे, जो नाम आपका अद्यावधि सुप्रसिद्ध है।

श्री चारुशिला बाग में श्री जानकी रसिक सरकार नित्य बाग विहार करने निकलते थे। समयानुसार होली. फूलबंगला आदि सभी महोत्सव बड़े समारोह से मनाये जाते थे।

श्री चारुशिला बाग में अपने आचार्य श्री दीनबन्धु जी की चरण पादुका के निकट मौलिश्री वृक्ष के नीचे चबूतरे पर विराजमान होकर आप श्री रामचरित मानस की कथा सुधा का नियमित रूप से वर्षण करते थे। आपकी कथा माधुरी से आकृष्ट होकर विशिष्ट श्रोतागण हजारों की संख्या में एकत्रित होते तथा कथामृत पान कर आनन्द विभोर हो जाते थे। इन में मिर्जापुर के सुप्रसिद्ध मानस मर्मज्ञ पं०श्री रामगुलाम द्विवेदी जी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। आपकी श्री द्विवेदी जी से प्रगाढ़ मैत्री हो गई और उभय महापुरुषों ने एक ही साथ श्री-साकेत यात्रा का निश्चय भी कर लिया।

एक बार आप विरहावेश में श्री प्राणसंजीवन जू को उपा-लंभ दे रहे थे कि आप वेद मर्यादा पालक होने से हम अनधि-कारियों को दर्शन नहीं दे सकते, तो कम से कम श्री हनुमत् लाल जू के दर्शन तो कराइये कि प्राण धारण का अवलंब

मिले। इतना कहना था कि श्री हनुमत् लाल जू प्रगट हो गये और मन्द मन्द मुसकान पूर्वक बोले कि मैं तो निरंतर आपके साथ ही रहता हूं।

जयमाल संग्रह लिखने के समय एक तेजस्वी ब्राह्मण ने आकर आपको श्री कोदोराम जी की मानस गुटका देकर कहा कि आप तो श्री रामचरित मानस की टीका करने आये थे, यह क्या करने लगे? पीछे पता लगा, वे श्री हनुमत् लाल जू थे। तभी से टीका में हाथ लगी, जो १२ वर्षों में पूरी हुई।

आपके एक कृपापत्र श्री सिया लाडिली शरण जी नित्य मधुकरी मांग कर लाते। आपको भोग लगाकर पीछे स्वयं प्रसाद ग्रहण करते थे। एक दिन वे श्री सीता कुण्ड की ओर मधुकरी के लिये निकल पड़े। वहीं उनको श्रीमनहरण मैथिली-रमण जू की दिव्य झलक प्राप्त हुई। वहीं पांच छै घंटे श्री-सिया लाड़िली शरण प्रेम-मूर्च्छा में वेसुध पड़े रहे। इस बीच में आपके श्री लाड़िले जू श्री सिया लाडिली शरण जी के कपट वेश में मधुकरी लाये। आपको पवाया और शेष नित्य नियम की भांति दीवाल की खूँटो पर झुलाकर लापता हो गये। बात प्रगट होने पर उस दिव्य मधुकरी का कण कण प्रसाद वितरण हुआ।

आपके शिष्यों में चार महापुरुष वड़े ही लब्धप्रतिष्ठ हुये। श्रीस्वामी जनकराजकिशोरी शरणजी "श्रीरसिकअली"।

रसिक प्रकाश भक्तमाल के रचयिता श्री स्वामी युगल-प्रिया जी। श्री स्वामी रामसेवक शरणजी। अनेक सद्ग्रंथों

के प्रसिद्ध भाष्यकार श्री स्वामी हरिदास जी महाराज।

बड़ी जगह के तत्कालीन महंथ आपके लघु गुरु भ्राता श्री स्वामी जानकी प्रसाद जी आपकी योग्यता पर रीझकर अपनी गद्दी आपको सौंपने आये। श्री महंथ जी ने कहा सबसे बड़े गुरु भाई होने के कारण न्याय पूर्वक गद्दी के उत्तराधिकारी आप ही थे। श्री गुरु महाराज की साकेत यात्रा के बाद आप की अनुपस्थिति में संत समाज ने मुझे महंथी दे दी थी। यह वस्तु न्यायतः आपकी है, इसे आप समझा लीजिये और सम्हालिये। आपने इस प्रस्तावको प्रेमपूर्वक अस्वीकार करदिया।

इसी भांति रीवां नरेश महाराज विश्वनाथ सिंह जी की बुलाहट और भेजी हुई सवारी को आपने लौटा दिया। कहा श्री कौशलेन्द्र कुमार जू की ड्योढ़ी छोड़कर, दूसरे किस के दरवाजे जांय?

कहते हैं कि संतों की शीथ प्रसादी के महात्म्य में किसी के संशय करने पर आपने संत शीथ को जमीन में गाड़ दी थी। एक महीने पर निकाली गई, ज्यों की त्यों ताजी। प्रगट प्रभाव देख सभी चकित रह गये।

तोताद्रि के आचार्य आपके दर्शनार्थ पधारे थे। श्रीधनुष-बाण के मुद्रांकण की ओर आपकी विशेष निष्ठा देखकर, वे आपसे शंख, चक्र छाप की महिमा अधिक बताने लगे। आपने कहा कि तंत्र शास्त्र की रीति से जिन देवता का आवाहन किया जाता है, उन्हीं के वाहन आयुध एवं परिकर भी आहूत होते हैं। आपकी सरल अकाट्य युक्ति सुनकर, वे आपसे पराश्त हो गये। आपके सहस्रों जिज्ञासुओं को तप्त धनुष बाणकी छापदी।

इसी भाँति श्री महाराज करुणासिन्धु जी के दिव्य चरित अपार हैं। यहाँ यत्किंचित संकेत मात्र समझिये।

संवत् १८८८ माघ शुक्ल नवमी के तीन दिन पूर्व आप सैकड़ों संतों के साथ श्री सरयू तट श्री रामघाट पर आ गये। तीन दिनों तक नाम कीर्त्तन और संतों के सुन्दर भण्डारा का समारोह चलता रहा। तब मिर्जापूर वाले श्री रामगुलाम द्विवेदी जी का पत्र पहुंचा "मैं साकेत चल रहा हूँ।" आप तो इसी प्रतीक्षा में थे। पत्र पाते ही वाह्य आचार्य लीला संवरण कर श्रीलड़ैती लालजू की नित्य निकुञ्ज लीलामें प्रविष्ट हो गये।

बोलिये श्री प्रिया प्रियतम जू के अतिशय प्यारे
परमाचार्य श्री स्वामी करुणासिन्धु जी
महाराज की जय।

॥ श्रीमैथिलीमुखचन्द्र चकोराय राघवेन्द्राय नमः ॥

मधुर उपासना के लिये परम उपादेय श्री रस मालिका नामक यह ग्रंथ रत्न जिन आर्ष प्रमाणों के आधार पर विरचित हुआ है. उनके अधिकांश संकलन श्री "राम नव रत्न सार संग्रह" नाम के ग्रन्थ में महाराज श्री करुणासिन्धु जी कर चुके हैं। उसके कतिपय अंश यहां उद्धृत किये जाते हैं।

यायोध्यापुरी सा सर्व वैकुण्ठानामेव मूलधारा प्रकृतेः परा तत्सद् ब्रह्ममया विरजोत्तरा दिव्य रत्न कोशाढ्या तस्यां नित्यमेव सीतारामयो विहार स्थल मस्तीति।

अथर्वण उत्तरार्द्ध रहस्य में यह वाक्य है, जो श्री-अयोध्यापुरी है, वह सर्व वैकुण्ठों की मूलधारा है। मूल प्रकृति से परा है। तत्सेद् ब्रह्ममयी है। विरजा से उत्तर है। दिव्य रत्नमय कोशों से युक्त है। तिस में श्री सीताराम जी का नित्य विहार स्थल है।

ॐ भृगुर्वै वारुणि र्वरुणं पितर मुपससार अधीहि भो भगवो ब्रह्मेति सो ब्रवीद्राम एव परब्रह्म रामादन्यं न किंचन यत्तएते रामादेवोत्पद्यन्ते राम एव विलीयन्ते राम एव स्थितिं लभन्ते तस्माद्राम एव विभुरिति तैत्तरीया श्रुतिः।

तैत्तरीय ब्राह्मण की श्रुति है कि वरुण के पुत्र भृगु अपने पिता वरुण के पास गये और कहा कि हे भगवन् मुझे ब्रह्मोपदेश दीजिये। यह सुनकर वरुण बोले कि श्रीराम ही परब्रह्म

❀ श्रीमैथिलीमुखचन्द्र चकोराय राघवेन्द्राय नमः ❀

मधुर उपासना के लिये परम उपादेय श्री रस मालिका नामक यह ग्रंथ रत्न जिन आर्ष प्रमाणों के आधार पर विरचित हुआ है, उनके अधिकांश संकलन श्री "राम नव रत्न सार संग्रह" नाम के ग्रन्थ में महाराज श्री करुणासिन्धु जी कर चुके हैं। उसके कतिपय अंश यहां उद्धृत किये जाते हैं।

यायोध्यापुरी सा सर्व वैकुण्ठानामेव मूलधारा प्रकृतेः परा तत्सद् ब्रह्ममया विरजोत्तरा दिव्य रत्न कोशाढ्या तस्याँ नित्यमेव सीतारामयो विहार स्थल मस्तीति।

अथर्वण उत्तरार्द्ध रहस्य में यह वाक्य है, जो श्री-अयोध्यापुरी है, वह सर्व वैकुण्ठों की मूलधारा है। मूल प्रकृति से परा है। तत्सेद् ब्रह्ममयी है। विरजा से उत्तर है। दिव्य रत्नमय कोशों से युक्त है। तिस में श्री सीताराम जी का नित्य विहार स्थल है।

ॐ भृगुर्वै वारुणि र्वरुणं पितर मुपससार अधीहि भो भगवों ब्रह्मे ति सो ब्रवीद्राम एव परब्रह्म रामादन्यं न किंचन यत्तएते रामादेवोत्पद्यन्ते राम एव विलीयन्ते राम एव स्थितिं लभन्ते तस्माद्राम एव विभुरिति तैत्तरीया श्रुतिः।

तैत्तरीय ब्राह्मण की श्रुति है कि वरुण के पुत्र भृगु अपने पिता वरुण के पास गये और कहा कि हे भगवन् मुझे ब्रह्मोपदेश दीजिये। यह सुनकर वरुण बोले कि श्रीराम ही परब्रह्म

हैं। श्रीराम जी से अन्य कुछ भी ब्रह्म नहीं हैं। चराचर लोक-वर्त्ती प्राणी श्रीराम जी से ही उत्पन्न होते हैं। उन्हीं में लीन होते हैं, मध्य में उन्हीं में स्थित रहते हैं। तस्मात् श्रीराम जी ही सर्व कारण व्यापक ब्रह्म हैं।

सप्त कोटि महामंत्राश्चित्त विभ्रम कारकाः।
एक एव परो मंत्रो रामइत्यक्षर द्वयम् ॥

बृहत् मनुस्मृति में वृद्ध मनु जी का बचन है कि सात करोड़ महामंत्र प्रधानतया गिनाये जाते हैं। परंतु एक सदृश प्रभाव कहने से वे सब चित्त में विभ्रांति उढ़ाने वाले हैं। इस हेतु सभी मंत्रों से परे एक ही मंत्र है जो कि 'राम' ये दो अक्षर वाला है।

पुँसा मगोचरं स्थानं केवलं प्रेम दायकम्।
नारी भाव समायुक्तास्तेषाँ दृश्यं भवेद् ध्रुवम् ॥

श्रीहनुमत्संहिता में श्रीहनुमान जी का बचन श्रीअगस्त्य-जी से है कि श्री जानकी रमण जू का अन्तःपुर श्री साकेत धाम पुरुषों के लिये अगोचर है। केवल प्रेम दायक हैं। रसराज शृङ्गारोपासक नायिका भावाविष्ट व्यक्तियों को ही निश्चय रूप से दृश्य होता है।

—::※::—

❀ श्रीजानकी वल्लभो विजयते ❀

❀ श्रीप्रमोद वन विहारिणी विहारिणौ विजयते ❀

❀ अथ वोध शास्त्रे रसमालिका प्रारम्भः ❀

—:०००:—

❀ श्लोक ❀

भाले हरेस्पदमथस्तुलसी च कंठे
बाहू धनस्सर रधूत्तम नाम युक्ताः।
विज्ञान–भक्ति मभिभूषण–भूषितांगा-
स्तेभ्योपि रामचरणः सततं नमामि ॥ १ ॥
श्रीसद्गुरोर्वचन मोह निशांध ताण्डो–
श्चित्तं ममालि जलजातक संपुटांडोः।

१—ललाट पर हरि-पादाकृति–ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक है, कंठ में तुलसी है, भुजाओं पर धनुष वाण की छाप है, श्रीसीताराम नाम जप में प्रवृत्त हैं, श्री सीताराम संयुक्त दाधांत या शरणांत नाम है, रहस्य ज्ञान और भक्ति रूपी भूषणों से अंग प्रत्यंग अलंकृत हैं, ऐसे श्री सीता-रामीय भक्तों को मैं श्री रामचरण दास जी नामक ग्रन्थकर्त्ता निरंतर नमस्कार करता हूं ॥१॥

२—मोह रूपी अमावस्या की रात्रि के कारण मेरा चित्त रूपी भ्रमर मेरे हृदय कमल में बन्द था। जब श्री सद्गुरु-वचन रूपी सूर्य का प्रकाश हुआ—

ज्ञानस्य भोर चरमचर शब्द त्यक्त्वा
दृश्यं स्वरूप सत्संग नमो नमस्ते ॥ २ ॥
नत्वा श्रीजानकी रामौ रास कुँज विहारिणौ।
कुर्वे श्रीरामचरणो ग्रन्थेभ्यो रसमालिकाम् ॥ ३ ॥
श्रीरामायण वेद शास्त्र गदितं तत्त्वं परं नाटके
यत्तंत्रस्मृति संहिता सुमुनिभिः सारं पुराणेष्वपि।
श्रीरामस्य रसो विरंचि हनुमद् व्यासादिभिः शंभुना
नाम्ना गुंफित भक्त रामचरणस्तां मालिकां तन्मयोम्॥४
रास मण्डलमध्यस्थं रसोल्लास समुत्सुकम्।
श्रीसीताराममहं वन्दे सखीगण समावृतम् ॥ ५ ॥

—तब ज्ञान रूपी प्रभात हुआ। अब माया, जीव और साधन ज्ञान-विषयक शब्दों को छोड़कर मैं अपने शुद्ध स्वरूप को लख पाया। ऐसे सत्संग को वार वार नमस्कार है ॥२॥

४—जिस परात्पर तत्त्व का वेद, शास्त्र, स्मृति, संहिता, तंत्र नाटक, रामायण आदि सद्ग्रन्थों में महामुनियों ने गान किया है जो पुराणों का सार है, जिस श्री जानकी रमणजू के रसमय चरित्र का श्रीहनुमतलाल जी, श्री शंकर जी, श्री ब्रह्मा जी एवं श्री व्यासादिकों ने गान किया हैं, उन्हीं वस्तुओं की माला में श्री रामचरण दास नामक भक्त ने गूँथी है।

५—श्रीमैथिली रघुनन्दन जू रास मंडल के मध्य सिंहासन पर विराजमान हैं। रसानन्द में निर्भर होकर रास क्रीड़ा प्रारम्भ करने को उत्कंठित हो रहे हैं। चारों ओर सखी गणों से घिरे हैं। उन्हें प्रणाम करता हूं।

* काव्य छन्द *

श्री गणेश श्री शंभु ब्रह्म[१] श्री सरस्वती श्री
श्री सुरसरि श्री गौरि चन्द्र श्री सूर्य यती[२] श्री
श्री दिकपति श्री अग्नि पवन श्रीवेद वरण श्री
श्री समेत सब देव वन्दि पद रामचरण श्री ॥ १ ॥
श्री श्रीपति[३] श्री शेष व्यास श्री देव ऋषय[४] श्री
श्री शुक श्रीसनकादि आदि ध्रुव त्यक्त विषय[५] श्री
श्री हनुमत प्रह्लाद भक्त श्रीवाल्मीक श्री
श्री सबके पद पद्म रेणु[६] धरि भक्ति लोक[७] श्री ॥

दो०—वन्दौं संत समाज शिव[८], वरनत परै न पार ।
टूक टूक हौं खाय कै, जियौं तासु के द्वार ॥ १ ॥
जनक नन्दिनी चरण रज, अति अनंद शिर राखि ।
भरत प्रेम अवतार भये, जासु चरण रज साखि[९] ॥२॥
राम नाम वन्दौं यदपि, मुख से कहा न जाय ।
ज्यों तिय निज पति नाम को, कहत बहुत सकुचाय॥३
विधि हरि हर मय अग्नि रवि, शशि रस पूरण शब्द[१०] ।
रामचरण सोइ नामगति[११], अकथ कहनको जब्द[१२] ॥४

१—ब्रह्मा जी । २-लोमश जी । ३-श्री विष्णु जी । ४-नारदजी ५-विषय को त्यागने वाले । ६-धूल । ७-रेखा । ८-कल्याण रूप । ९-श्री मैथिली जू के चरण-रज-महिमा के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं श्री भरत-लालजू । इन्हीं श्री रज के प्रभाव से आप प्रेमावतार बन गये । १०-इसका विवरण अवकाश १२ में देखिये । ११-प्रभाव । १२-जीभ बन्द हो जाती है ।

शेष वेद संवाद वर, अगुन सगुन को बाप[१]।
कहौं सुचनिका[२] सुमति विधि,[३] श्री महाराज[४] प्रताप ॥५
सन्त शास्त्र बहु स्वाद[५] लै, श्रुति संहिता प्रमाण।
वस्तु अमित शुभ[६] पात्र[७] लघु, जानहिं परम सुजान ॥६॥

*** रोला छन्द ***

एक समय श्रुति चार ब्रह्मपुर[८] करहिं विचारा।
ब्रह्म निरूपन करहिं सगुन निर्गुन निरुवारा[९] ॥
गुष्टि[१०] परस्पर भई बोध थल[११] वेगि न पाये।
कहेउ[१२] अथर्वण वेद चारि अहिपति[१३] पै आये ॥ १ ॥
अस्तुति करि बहु भांति लषण तन प्रगट दिखाये।
निज संदेह अनेक भांति कहि प्रभुहि सुनाये ॥
परम धाम पर रूप मन्त्र पर सब रस जानहु।
त्तर[१४] अत्तर[१५] गुन[१६] अगुन शब्द[१७] के रूप बखानहु ॥२

---

* वेदों ने श्री शेष जी से नव प्रश्न पूछे, १ परात्पर धाम। २ परात्पर रूप। ३ परात्पर मंत्र। ४ परात्पर रस। ५ माया स्वरूप। ६ जीव स्वरूप। ७ ब्रह्म का सगुण। ८ निर्गुण स्वरूप ९ शब्द स्वरूप।

१ कारण। २ किंचिन्मात्र। ३ अपनी बुद्धि के अनुरूप। ५ रस-चरित्रों का आस्वादन करके। ६ मंगलमय। ७ अन्तःकरण रूपी बर्तन। ८ ब्रह्म लोक। ९ निर्णय। १० सत्संग में विचार विमर्श। ११ समाधान वाला निर्णय। १२ प्रस्ताव करने पर। १३ श्री शेषजी। १४ माया। १५ जीव। १६ सगुण ब्रह्म। १७ प्रमुख मतों की आचार्य वाणी। ४ सद्गुरुजी।

जय अनंत भगवन्त गुह्य पर गुह्य[1] सुनावहु ।
* बिनु पूछा बिनु जान जान सब निज मुख गावहु ॥
सुनि अनंत विज्ञान ध्यान जनु सोवत जागेउ ।
रूप सच्चिदानन्द[2] भक्ति[3] बल बरनन लागेउ ॥ ३ ॥
साम आदि श्रुति धन्य धन्य मैं कहव सुनव तू ।
खल विषई पर इष्ट[4] वाद रत[5] कुटिल गुनव तू ॥
तिन कहँ यह नहिं देव प्राण अरु धर्म देव वरु ।
कहौं सुनहु चित लाय जथा मति ब्रह्म[6] भक्ति[7] धरु[8] ॥४॥
सुनहु प्रथम पर धाम प्रश्न सब कहव बहोरी ।
लगे कहन सौमित्रि सोय पद सुरति[9] जोरी ॥
भक्ति रूप हिय आय भयो अति सेत सेत[10] तन ।
गुन समुद्र श्रुति चारि मिलेउ श्रोता मन के मन[11] ॥ ५ ॥
महर्लोक छिति[12] उपर विराजत जोजन कोटी ।
रामचरण तहँ सदा काल को घोंटा घोंटी[13] ॥
तासु ऊर्ध्व[14] जन लोक कोटि योजन द्वै जानौ ।
चारि कोटि तप लोक तासु के उपर बखानौ ॥ ६ ॥

---

* जो मेरा जाना हुआ नहीं है उसके भी आप ज्ञाता हैं। अतः जो मैंने नहीं पूछा, वह भी कहें। सुनकर श्रीशेषजी का विज्ञान ध्यान में आ गया जैसे कोई सोया हुआ जग उठे।

१–अति गोपनीय। २-श्रीजानकी रमणजू। ३-श्रीजनक नन्दिनीजू के कृपा बल पाकर। ४-जिसके इष्ट दूसरे हों। ५-कुतर्की। ६–श्रीराघवेन्द्रजू ७–श्रीरघुनन्दन प्राणवल्लभाजू। ८--अर्थात् श्रीसाकेत। ९-ध्यान निष्ट होकर। १०–गौरांग विग्रह और भी दिव्य हो गया। ११-अपने मन से मिले मन वाले। १२–पृथ्वी। १३ अर्थात् नाशवान हैं। १४–ऊपर।

सत्य लोक परमान[1] कोटि वसु[2] तापर राजै ।
ऊर्ध्व[3] तासु के दून लोक कौमार विराजै ॥
उमा लोक तेहि ऊपर कोटि बत्तिस परमाना ।
तासु उपर शिव लोक क्रमहिते[4] लखहिं सुजाना ॥ ७॥
सप्तावरण विशेष[5] शंभु तहँ सर्व शक्तियुत[6] ।
* बिना राम शुभ कर्म उहाँ लगि जाति बहुरि च्युत ॥
ताके उपर असंख्य[7] धाम एक परम रुचिर अति ।
सो विस्तार[8] अनन्त उच्च[9] कछु कहौं अल्पमति ॥ ८॥
जात रूप[10] महि मई नई नित काँच गची है ।
रामचरण को कहै जवन हरि आप रची है ॥
भिन्न भिन्न बहु सदन[11] मदन[12] जनु सदन सबै सुचि[13] ।
नाना विधि मनि रचित सुनत उपजे नाना रुचि[14] ॥ ९॥
दासन के सब सदन काम तरु[15] धेनु भवन प्रति ।
वीथिन्ह कुँकुम अगर मलय मृग[16] कीच मची अति ॥

---

* श्री जानकीरमण जू से विमुख होकर केवल सत्कर्म के बल से वहां पहुँचने वाले पुनः गिर जाते हैं ।

१ दूरी पर । २ आठ । ३ ऊपर । ४ क्रमानुसार चौसठ हुआ । ५ एक पाद विभूति के इस सप्तावरण का विवरण चौदहवें अवकाश के घनाक्षरी छन्द में है । ६ अर्थात् नश्वर समझकर संहार करते हैं । ७ अनन्त योजन । ८ लम्बाई चौड़ाई और ९ ऊँचाई भी अनंत है । १० सुवर्ण । ११ महल । १२ कामदेव । १३ प्राकृतिक विकार से रहित । १४ प्राप्त करने की चाह । १५ घर घर कल्प वृक्ष और कामधेनु । १६ कस्तूरी ।

पुर के मध्य निकेत[1] उतँग[2] सेत[3] एक सोहै।
मनि मंडप मनि खंभ दीप मनसिज[4] मन मोहै ॥ १० ॥
* मुक्ता वन्दन वार कलश चँदवा जु झपे हैं।
रवि शशि दामिनि नषत काल डर मनहु छपे हैं ॥
सिंहासन मनि कलित[5] तहाँ एक पुरुष बिराजै।
सहस शीश मुख नयन श्रवण कर पग छवि छाजै ॥ ११ ॥
सहसहु शीश क्रीट सहस द्वय कुँडल भासै[6]।
‡ मर्कत गिरि पर उदय मनहु रवि सहस कलासै ॥
पदिक हार वनमाल रतन अँगद[7] कंकण कर।
वसन पीत उपवीत मुद्रिका किंकिनि कटि पर ॥ १२ ॥
नूपुर पग अरविन्द[8] द्वन्द[9] मुक्ता नख[10] जोती।
प्रभु छवि कहि न सिराई शारदा कोटिक होती ॥
वाम अँग निज[13] शक्ति रूप की राशि[11] कहै को।
जग उपमा को देइ जगत परिहास[12] सहै को ॥ १३ ॥

---

* यहाँ कलशों को सूर्य, चन्द्रमा, मोती के वंदनवार को बिजली, चन्दोवे के जड़ीदार वेल बूटों को तारागण माना गया है। ये सब काल के भय से नश्वर ब्रह्मांड को त्याग कर इस अविनाशी लोक में आकर मानो छिपे हों।

‡ श्री महाविष्णु भगवान के श्याम शीश मानो नील पर्वत के शिखर हैं। उन पर एक हजार क्रीट मानो हजारों कला से उदित सूर्य हैं।

१ भवन। २ ऊँचा, ३ स्फटिक मणि रचित उज्ज्वल। ४ कामदेव ५ सुसज्जित। ६ जगमगा रहे हैं। ७ बाहु भूषण। ८ चरण कमल में ९ दोनों। १० मोती के समान चरण नख ज्योतिर्मय हैं। ११ सौन्दर्य के निधान। १२ निन्दा। १३ महालक्ष्मी जी।

नवधा भक्ति प्रधान[1] लिये कर छत्र चमर वर।
निर्तत सखी अनेक करत आह्लाद[2] ज्ञान घर ॥
महाविष्णु जगदीश[3] जासु के अँश सदाई।
उपजहिं विधि हरि शंभु करहिं जग को ठकुराई[4] ॥ १४ ॥
उतपति पालन प्रलय जासु के वांट[5] परी है।
कारण पुरुष प्रसिद्ध तीन गुन त्रिविध करी है।
जासु चरण मकरंद गंग तहँ धार धसी है।
* प्रभु आगे छपि जाहि काम रवि कोटि शशी है ॥ १५ ॥
दोहा—धाम मोक्ष विद्या भई, नहीं अविद्या लेश।
राम चरण पुर केर श्री, कहेउ ब्रह्मपति शेष ॥ १ ॥
सुनि के निगम अनंद[6] धर, गहि पद आरत भाषि।
‡ दीन काल लखि साधु जन, निज धन सकहि न राखि॥२

इति श्री रस मालिकायां बोध शास्त्रे सप्तावरण नाम महाविष्णु धाम संज्ञा वर्णनं नाम प्रथमोऽवकाशः ॥ १ ॥

१--नवधा भक्ति वहाँ की सखियों की यूथेश्वरियां हैं। २-आनन्द और ज्ञान का तो वह धाम घर ही है। ३-अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन्हीं श्रीमहाविष्णु के अँश से सर्वदा प्रगट हुआ करते हैं। ४--शासन ५--हिस्से में। ६--आनन्दमय महाविष्णु लोक का बर्णन।

* इन श्रीमहाविष्णु के सौन्दर्य के सामने काम, प्रताप के सामने सूर्य और यश के सामने चन्द्रमा मंद पड़ जाते हैं।

‡ जैसे दुर्भिक्ष के समय कंगालों को भूखों मरते देख साधु-हृदय धनी व्यक्ति अपने धन दिये बिना नहीं रह सकते, वैसे ही दीन आर्त जिज्ञासु को देखकर रहस्य वेत्ता मर्मी सज्जन अपने गोपनीय तत्वों को उनसे छिपाकर नहीं रख सकते।

※ अथ अवकाश २ ※

॥ रोला छंद ॥

※ श्रोता मिलि भयो प्रेम वचन प्रति भाव सहस छवि।
सहस भाष प्रति अर्थ प्रगट भये मनहु लच्छ रवि॥
लगे कहन सुख सहित गिरा[१] सत सहस वाक[२] जनु।
कहत मनहु पट खोलि[३] वदन पर लसत स्वेत[४] कनु॥१॥
असित[५] तासु के उपर लोक योगेश्वर[६] सोहै।
सद[७] स्थान प्रभु केर कहै उपमा कवि को है॥
अग्नि ज्वाल की माल[८] तेज मय धाम अचर[९] है।
नौवति एक रस बजै रूप मंगल घर पर है ‡॥२॥
योग महा शिव रूप धरे प्रभु आप बसे हैं।
जहाँ तलक सद वस्तु योग वल सकल कसे हैं॥
† पुरुष तेज को रूप अमित छवि है अपने बस।
अमित दास[१०] निज रूप दिहे जस आपु एक रस[११]॥३॥

---

१ वचन। २ सरस्वती। ३ वक्ता के पक्ष में। (क) दुराव हटा कर। श्रोता पक्ष में (ख) अज्ञानरूपी पर्दा खोलकर। ४ पसीने की बूँद। ५ असंख्य योजन। ६ श्रीमहाशंभुजी। ७ अविनाशी। ८ समूह। ९ अचल, अक्षय। १० योगि गण। ११ अजर अमर।

※ सुयोग्य श्रोताओं के मिलने से श्री शेष जी के हृदय में प्रेम बढ़ा। एक एक विषय के ऊपर हजारों सुन्दर सुन्दर भावों की स्फुरणा हुई। एक एक भाव के हजारों अर्थ फुरने लगे। मानो लाखों सूर्य हृद्देश को प्रकाशित कर रहे हों।

‡ वह लोक सबसे परे मंगल का स्वरूप है। † परिशिष्ट देखें।

अमल अचल सुख सिंधु धाम किमि कहौं मलिन मन[१] ।
कहहिं शेष श्रुति वेद उभय[२] विज्ञान भक्ति घन[३] ॥
अपर सुनहु तेहि उपर धाम एक दिव्य विराजै ।
निर्गुन निर्मल अचल अकल[४] परिपूरण[५] आजै[६] ॥ ४ ॥
महा प्रलय त्रय[७] नाहिं सनातन[८] रूप धाम है ।
राम चरण को कहे जहाँ नहिं रैन[९] घाम है ॥
अति अचिन्त्य[१०] अद्वैत[११] रूप निर्लेप[१२] भवन सह[१३] ।
* जाहि दृष्टि सम त्याग सेव्य सम भक्ति भवन जहँ ॥५॥
वासुदेव अस नाम पुरुष पुर मध्य विराजै ।
† रवि शशि दामिनी नखत वनज घन कोटिक लाजै ॥
नेत्तर[१४] रूप अनूप ब्रह्म अद्भुत छवि छाजै ।
‡ दासन आतम करई निकट चिद् भूषण साजै ॥ ६ ॥

---

* वहाँ ऐसे भक्तों का निवास है जो समत्व दृष्टि वाले हैं, वैराग्यवान हैं और 'निज प्रभुमय' जगत को देखते हैं।

† यहाँ भगवान श्री वासुदेव जी का स्वरूप वर्णन है । आपके क्रीट, कुण्डल के आगे सूर्य, मुख के आगे पूर्णचन्द्र, पीताम्बर के आगे बिजली, मणि भूषणों के आगे तारागण, नयन, चरण, हाथ के आगे कमल, अंग वर्ण के आगे सजलघन फीके पड़ जाते हैं ।

‡ अपने भक्तोंको दिव्य भूषण बनाकर श्रीअंगमें धारणकर लेतेहैं ।

१ वक्ता का कार्पण्य है । २ श्रोता वक्ता दोनों । ३ बरसाने वाले बादल । ४ खंड रहित । ५ सर्वांग पूर्ण । ६ सुशोभित हो रहा है । ७ महाविष्णु, महाशंभु, और वासुदेव इन तीनों लोकों में । ८ नित्य, अनादि । ९ दिन रात । १० मन से परे । ११ बेजोड़ । १२ अनासक्त १३ एक समान । १४ व्यापक ।

अपर कहन प्रभु लगे वेद बोले कर जोरी।
नाथ एक सन्देह मेटि पुनि कहहु बहोरी॥
अविनाशी पुर कहेउ अंड[१] भीतर की बाहिर।
महा प्रलय ब्रह्मांड नाश तुम को सब जाहिर॥ ७॥
कहों सुनहु सुर धेनु[२] शीश प्रभु श्रीमनि[३] दीन्हा।
ताते अभिमत[४] देइ राउ[५] भल[६] रंक[७] न चीन्हा[८]॥
‡ विधि दिन प्रति गो नाश महा मनि नाश न पावै।
† साधक अवरन करै सिद्धि भय दूरि बहावै॥ ८॥
गो स्वरूप ब्रह्मांड अंग जग[९] क्रम ते जानव।
त्रैपुर[१०] मनि तेहि शीश भक्तिगुन* तेहि ते मानव॥
* लखव उर्ध्व गो वदन शब्द हुँकार अनाहद[११]।
सोइ गोपुर मन वचन कर्म पर साधु महा वद॥ ९॥
जवन रुचै नहि ताहि ताहि सो उगिल बहावै।
राम चरण मुख द्वार शब्द संग गोपुर जावै॥

---

‡ साधक किसी कार्य के लिये आवश्यक सामग्रियां जुटा लेता है और कार्य-सिद्ध होने पर उन्हें त्याग देता है। वैसेही चराचर प्राणियों के प्रारब्ध भुगताकर उनके स्थूल शरीर के साथ साथ उनका आधार भूत ब्रह्मांड नष्ट कर दिया जाता है। † परिशिष्ट देखिये।

* इसी मणि के साहचर्य से भक्ति ब्रह्मांड में व्यापक है।

१ ब्रह्मांड। २ यहां ब्रह्मांड का कामधेनु रूप माना गया है। ३ चिंतामणि। ४ मनोवांछित। ५ धनी। ६ भला बुरा। ७ दरिद्र। ८ विचारती है। ९ चौदह भुवन। १० श्री महाविष्णु, श्री महाशंभु, श्रीवासुदेवजी-इन तीनों के लोक मानो चिंतामणि हैं। ११ शब्दब्रह्म।

कोउ मुनीश की वाक्य वहाँ लगि द्वै विधि भाखै।
जिमि अदेख कह सुनी जोरि द्वै घटि बढ़ि राखै ॥ १० ॥

दो०–रतन अमोल बिकात जिमि, फिरत दुकान दुकान।
मोल कहत मति सरिस सब, कीमति सबै अजान ॥
‡ कहत एक समुझत अमित, चतुर तत्व वित सोइ।
अश्रुपात गद गद बयन, सकै कवन विधि गोइ ॥१॥

इति श्री रसमालिकायां बोध शास्त्रे द्वितीय स्थाने सुचनिका वर्णनं नाम द्वितीयोऽवकाशः ॥ २ ॥

---

* जैसे हुंकार करने के समय गौ का मुख ऊपर की ओर उठ जाता है, बैसे ही शब्द–ब्रह्म के प्रयोग से ब्रह्मांड प्राणियों की चित्तवृत्ति त्रिपाद विभूति की ओर उन्मुख हो जाती है। महान संतों का कहना है कि वह अक्षय गोलोक मन, वचन, कर्म से अगोचर है। यह ब्रह्मांड गो बद्ध-जीवों को तो जुगाली करके आत्मसात कर लेती है, पर भगवत्कृपा प्रेरित साधन निष्ठ मुमुक्षु इसे रुचते ही नहीं। उन्हें उगल डालती है। तब मुमुक्षु इससे पिंड छुड़ाकर अपने साधन सहयोग से त्रैपाद विभूति में पहुँच जाते हैं।

° कोई कहते ये तीनों लोक नीचे ऊपर के क्रम से हैं, कोई एक ही समतल में बताते हैं। जैसे बिना देखी वस्तुओं के वर्णन करने में अपनी ओर से दो बातें जोड़कर बढ़ा घटा कर ही तो कहते हैं।

‡ तत्वों के मर्म समझने वालों में चतुर वही कहाता है जो सांकेतिक शब्द में कही गई एक ही बात का आशय अत्यधिक विस्तार के साथ समझ लेवें। जब ऐसा प्रेमी श्रोता मिल जाय, जिसे भगवत् चरित्र सुनते ही प्रेमाश्रु बहने लगें, बोलने में कंठ रुँध जाय, तो उस से सहृदय वक्ता कोई रहस्य कैसे छिपाकर रख सकते हैं!

※ अथ अवकाश ३ ※

※ रोला छन्द ※

सुनहु वेद निष्खेद[१] धाम गुन[२] तीत परम शुचि[३] ।
वर्णाश्रम सुख दुःख तहाँ नहिं पाप पुण्य रुचि[४] ॥
अति निर्मल निर्वान[५] परम पद महाचयन[६] पुर ।
महादिव्य अति अचल अगम है ब्रह्मादिक सुर ॥ १ ॥
महा प्रकृति पर विरज[७] एक रस द्वैत[८] नाश तहँ ।
† चातक रसिक अनेक मेघ पुर बुंद रास जहँ ॥
पुर अनन्त विस्तार उच्च सोइ[९] द्वार चारि वर ।
महा महा मनि जटित अमित जन[१०] द्वार द्वार पर ॥ २ ॥
कंचन महि मनि जटित रंग वहु भिन्न भिन्नाद्भुत[११] ।
अंकित चरण गोविन्द[१२] वृन्द[१३] कुलिशादि चिह्न युत ॥
सदन अनेक विचित्र मदन जनु चित्र कार बहु ।
रतन रंग बहु लगे नवग्रह[१४] कला[१५] सार बहु ॥ ३ ॥

इस अवकाश में गोलोक (वृन्दावन) का वर्णन है ।

† जैसे पपीहे अनन्य भाव से बादल से पाकर केवल स्वाती-बूँदों का ही पान करते हैं, वैसे ही वहाँ की व्रजाङ्गनाएँ श्री वृन्दावन विहारी लाल द्वारा रचित रास रस का ही आस्वादन करती रहती हैं ।

१ दुःख रहित । २ रज, तम, सत तीनों मायिक गुणों से परे । ३ पवित्र । ४ चाह । ५ मोक्ष । ६ परमानन्दमय । ७ मायिक विकारों से रहित । ८ अपने और पराये का भेद भाव । ९ ऊँचाई भी अनंत योजनों की । १० रक्षक । ११ चित्र विचित्र । १२ श्री राधा रमण जू । १३ श्री चरण चिह्नों के समूह । १४ मानों बहुत नवग्रह हों । १५ प्रकाश के असली रूप हैं ।

सखन केर सब भवन जवन[1] नहिं गवन करत जग । *
वपु किशोर चितचोर छनक नहिं तजत ईश लग[2] ॥
निर्मल अगर कपूर मलय कुँकुम की कीचैं ।
प्रभु की विहरनि हार[3] बनी कुंजन बिच बीचैं ॥ ४ ॥
† बन वरनत नहिं बनै परन प्रति कोटि अमर तरु ।
सदा सनातन[4] भार फूल फल पल्लव रस घरु[5] ॥
अलि[6] अलि[7] कोकिल कीर मोर बोलत जस[8] पिय मन ।
श्रवत सुधा[9] तरु विहँग[10] द्रवत घन[11] ध्यान रसिकजन ॥ ५
धेनु[12] वेनु धर[13] केरि रोम[14] प्रति अमित धेनु सुर ।
सब सचिज्ञ[15] विज्ञान रूप रस भक्ति धर्म[16] धुर ॥
श्रीजम्बूफल चिन्ह[17] जात[18] पुर मध्य श्याम[19] जल ।
* कोउ विरजा कह सो तौ नादि प्रभु जल विहारथल ॥ ६ ॥

---

† श्री वृन्दाबन के बृक्ष के एक एक पत्ते पर कोटि कोटि कल्प-बृक्ष निछावर करने योग्य हैं ।

* श्री विरजा अनादि हैं । एक पाद त्रिपाद के सीमा-स्वरूप हैं । यह श्री यमुना जी तो भगवान श्री कृष्ण का विहार-स्थल है । इन्हें विरजा कहना भूल है ।

१ जौन, जो । * नित्य सखा हैं, कभी संसार में नहीं जाते । २ सामीप्य । ३ विहार करने के अनुरूप । ४ अनादि काल से एक रस बने हैं । ५ रस के निवास स्थान हैं । ६ सखियाँ । ७ भ्रमरी । ८ जैसी रुचि श्री बिहारी जी की देखती वैसी ही रसीली ध्वनि करती हैं । ९ बृक्षों से अमृत कण टपकते हैं । १० पक्षी हृदय को रस में भिजा देते । ११ धन्य हैं । १२ गौ । १३ वंशीधर श्रीकृष्णजी । १४ एक एक रोएँ पर असंख्य कामधेनु निछावर । १५ चिन्मय, ज्ञानानन्द स्वरूप । १६ धर्म धुरंधर । १७ चरण चिन्ह । १८ उत्पन्न १९ श्रीयमुनाजी

॥ सुगन्धा छन्द ॥

मनि मानिक सोपान[1] कूल[2] दुहुँ चमकई ।
† जनु घन ढिग उर तड़ित अमित शशि दमकई ॥
विकसिति रंग अनेक कमल अलि[3] गुँजहीं ।
* जिमि गद गद स्वर नाचि सुजन[4] हरि पूजहीं ॥ १ ॥
तेहि तट[5] तरुवर[6] संघन नाम वृन्दावन ।
‡ रतन फूल फल परन सदा जस प्रभु मन ॥
तहँ विहरत ललि लाल सखा सखि ओरिन ।
राम चरण रस रीझि सुरंग[7] लिहे झोरिन ॥ २ ॥
विहँसि सुन्दरी सुरंग श्याम पर डारहीं ।
प्रभु हँसि सखन सहित पिचकारिनि मारहीं ॥
विशद[8] वसन[9] तन झीन[10] रंग भरे सोहहीं ।
निर्मल शशि[11] मुख मोरि लाल मन मोहहिं ॥ ३ ॥

---

† यहाँ श्याम यमुना जल का बादल से तथा मणि, माणिक्य को बिजली और चन्द्रमा से उत्प्रेक्षाएँ दी गई हैं। जो सीढ़ियाँ जल से ऊपर हैं उनके लिये ढिग अर्थात् समीप कहा गया और जो जल के अन्दर डूबी हैं उनके लिये उर अर्थात् मध्य में कहा गया।

* भ्रमरियों का मँडराना ही मानो सुन्दर नृत्य हैं, गुंजार ही गद्गद् कंठ से स्तुति करना है।

‡ इन वृक्षों के फूल,फल और पत्ते रत्नों के हैं। जैसी प्रभु की रुचि देखते वैसे ही स्वरूप धारण कर लेते हैं।

१ श्री यमुना घाट की सीढ़ियाँ। २ तट। ३ भ्रमरी। ४ सुन्दर भक्त ५ श्री यमुना के किनारे पर। ६ बड़े बड़े वृक्ष। ७ अबीर, गुलाल। ८ उज्ज्वल। ९ वस्त्र। १० महीन, यह वस्त्र का विशेषण है। ११ चंद्र

* बेसरि मृग चष चपल भाल वेंदी कसे ।
विधु उर शिर जनु देव असुर गुरु से बसे ॥
चमकत शिर चन्द्रिका माँग मुक्तन गुहे ।
‡ मानहु ध्रुव अहि नारि उपर बहु उड़ रहे ॥ ४ ॥
चर्चित[1] विविध सुगंध अंग अंगनि पर ।
कनक फूल[2] मनि कनक हार[3] छवि भरि[4] धर ॥
कंकन किंकिनि नूपुर धुनि दुहुँ दिशि भरी ।
रामचरण सखि दवरि[5] घेरि प्रभु कहँ धरी ॥ ५ ॥

॥ हरि गीत छन्द ॥

† धर हरिहिं हार उतार निज उर डारि निज हरि उर धरी ।
विहँसति हँसति मुस्काति हरिछबि छकित रसछवि[6] बसकरी

---

* श्री ब्रज सुन्दरी जी की नासिका में बेसर है। मृगा के समान नयन चंचल हो रहे हैं। ललाट में वेंदी सटी है। मानो चन्द्रमा के हृदय में बृहस्पति और शिर पर शुक्राचार्य बसे हों। यहाँ मुख चन्द्रमा है। पीत बेसर बृहस्पति हैं, श्वेत वेंदी शुक्राचार्य हैं।

‡ मोती के दाने बहुत से ध्रुव तारे हैं। केशों की वेणी मानो नागिन है।

† श्री बिहारी जी को पकड़ कर उनके हृदय की माला उतार कर अपने हृदय पर धारण कर ली और अपनी उनके गले में डाल दी।

१ अनुलेपित। २ सोने के कर्णफूल। ३ सोने और मणियों की बनी हृदय-हार। ४ शोभा से परिपूर्ण। ५ दौड़कर। ६ रसमयी शोभा है जिनकी उन मनमोहन को।

कलमुकुट कुंडल कोटि कलरवि[1] अलक[2] कुंचित अलि[3] अलैं[4]
मुखपर बुलाक मयंक[5] सुत जनु तामरस[6] दल पर हलैं ॥१॥
बनमाल कंकन वलय किंकिनि चरण पैजनिया बनी।
भुज ते गहे भुज भामिनी बिच[8] बीच भइ राहस[7] घनी ॥
रचि रास मंडल मंडि[9] मंडल रसहि[10] मंडेउ रस मढ़ी[11]।
चमकृत नचत चल चन्द्रिकामृत[12] चन्द्र गंडहिखुलिगड़ी[13]

॥ सुगन्धा छन्द ॥

* गडिय गाडि जनु उमँगि अमिय आनन्द भरि।
होइ गयौ मंडल सिन्धु रतन तिय उर हरि ॥
कुँकुम लेपनो रोज[14] पदिक उर पर बनु।
ललित दुकूल[15] किनारि सघन मनि गन कनु[16] ॥१॥

---

* गाड़ी के चक्के के समान गोलाकार रास मंडल ही समुद्र है। रास जनित आनन्द ही समुद्र में भरा हुआ अमृत के समान जल है। इस समुद्र में नायिकाएँ रत्न हैं। समुद्र रत्नाकर कहाता है। मन हरण नन्दकुमार जू के हृदय से नायिका लगी है। मानो समुद्र से प्रगट रत्न अपने हृदय पर धारण कर लिया हो।

१ सुन्दर क्रीट कुण्डल करोड़ों मनोहर सूर्य के समान प्रकाशवान हैं। २ घुंघुराले वाल। ३ मानो भ्रमर। ४ झूलते हैं। ५ चन्द्रपुत्र। ६ कमल। ७ रास का सघन मंडल। ८ दो दो नायिकाओं के बीच २ में अनेक रूपों से। ९ अपनी रूप राशि से रास मंडल को अलंकृत किया। १० नायिकाओं को रस से ओत-प्रोत कर दिया। ११ आप भी रस में लिप्त हो गये। १२ पसीने की बून्दें मानो चन्द्रिका रूपी चन्द्र से स्रवित अमृत कण हो। १३ चन्द्रमा के समान मनोहर कपोल पर श्रमकण पड़े खूब खुल रहे हैं। १४ उरोज पर केशर लिपा है। १५ साड़ी। १६ मणि-कण।

॥ हरि गीत छन्द ॥

झन[1] खसत स्रग[2] खसकत वसन मसकत[3] करै गरकत[4] रसै।
धुधुकत मृदंग निशान धधकत धुधुकि धुनितिय कर[5] कसै॥
बहु वेनु[6] नंदुर सारँगी तामूर करोपंगम[7] धरे।
झनकत मँजीरा झाँझ झन झन छमक छम छम छवि भरे॥
* शशि कलश ढरकत मनहुँ भभकत भेरि अमृत स्वर भरो।
सहनाई स्वर पर[8] उठत पग जिमि संत चित सूरति धरी॥
मुह चंग बंशी बजत जागत[9] जगत जानहिं हरि[10] हठी।
† मंजीर नूपुर जंग कंकण राग छत्तीसों छठी॥ २॥

॥ सुगंधा छंद ॥

षट छत्तिस कढु राग मधुर स्वर रागिनी।
अद्भुत गावहिं तेहि पर अपर सुभागिनी॥
कोटि रमा रति सरिस कला कल ल्यावहीं।
रामचरण रस अद्भुत सखि बरषावहीं॥

---

* भेरी अर्थात् नगाड़े की मनोहर ध्वनि के लिये उत्प्रेक्षा है। मानो चन्द्रमा कलशे से अमृत ढरका रहा है, उसी की भभक भभक ध्वनि है। यहाँ नायिका का मुख चन्द्रमा, उरोज, कलश, उरोज से पसीने की बूंदें टपकना अमृत उड़ेलना है।

† कंकण, किंकणी और नूपुर की ध्वनि ने संगीत युद्ध में राग-रागिनियों को छांट दिया।

१ पसीने की बूंदें। २ पुष्प माला। ३ कंचुकी को हाथों से मसका रहे हैं। ४ रस में डुबो रहे हैं। ५ नायिका के कर कंज जोरों से दबा रहे हैं। ६ बंशी। ७ हाथ में नस तरंग नामक बाजा धारण किये हैं। ८। स्वर में ताल मिलाकर नूपुर छमकाना। ९ बंशी ध्वनि सुनकर संसारसे मन हट जाता है। १० भगवत्प्राप्ति के लिये हठ ठाने हुए साधक।

॥ चंचरीक छन्द ॥

गावत रस[१] रंग सखिय नाचत बनमाली ॥
ल्यावति गति[२] थेइ थेइ एक ताल ताल देइ देइ।
तन तनन तनन तान धरत फेरत कर हाली[३] ॥
चमकत छवि छला[४] तड़ित निंदत[५] नष ज्योति चलित।
ललित[६] ललकि ललकतिकर अँगुली छवि[७] साली ॥१॥
† चितवनि तिरछी कुरंग कंज खंज झष अनंग।
विहँसति मुख मोरि मोरि तोरि तोरि ताली ॥
परसत कुच हाथ लाल पीवत रस अधर माल[९]।
लालन मुख चंचरीक[१०] कमल वदन आली ॥ २॥
* मनिकन बहु कनक बिन्दु महि खस जनु नखत इन्दु।
वृन्दन[११] जग मगति ज्योति अचल सचल लाली ॥

---

† नायिका की तिरछी चितवनि की शोभा मृगा, कमल, खंजन-पक्षी, और काम की मछली की सुन्दरता को अपने सामने तुच्छ जान कर हँस रही हैं। हाथ की ताली से ताल देकर हाव पूर्वक मुख मोड़ कर हँसती हैं।

* नृत्यकाल में नायिकाओं के शृङ्गार से मणि कण एवं सोने की वेंदियाँ झर झर कर भूमि पर बिखरी हैं। मानो चन्द्रमा और तारागण हों। आकाश के तारे चन्द्रमा चलते हैं, ये अचल हैं। सखियाँ नृत्य में चंचल हैं।

१ प्रेमानन्द में निर्भर होकर। २ नृत्य ढंग। ३ हाथ हिलाकर भाव दिखाना। ४ अंगूठी। ५ नख का प्रकाश विजली को मंद कर रहा है। ६ हाव पूर्वक संचालन। ७ शोभा सम्पन्न। ९ सुस्वादु। १०-भ्रमर। ११ समूह के समूह।

विलसत सुख अनँद[१] वेलि नृतति चलि करत केलि[२] ।
हेलि[३] परी सरित[४] पानि[५] पानि[६] कमल नाली ॥३॥
बहु विधि जल क्रीड़ा करि मिलत प्रेम आनंद भरि ।
‡ वेसरि गे अलक उरझि हरि बुलाक ब्याली[७] ॥
राम चरण प्रेम भरी अम्बुज कर गेन्द करी ।
मारत उत सखी इतहि सखा लाल ख्याली[८] ॥ ४ ॥

॥ सुगन्धा छन्द ॥

शेष महेश गणेश दिनेश[९] कोटि मुख ।
कोटि कल्प भरि कहहिं सकहिं नहिं सो सुख ॥
मो मति पतित[१०] समुद्र कहौ किमि जस[११] रस ।
† निंदत अमृत सिन्धु रसिक जेहि रस बस ॥ १ ॥

---

‡ नायिका का वेसर श्री विहारी जी के जुलफ में तथा लाल जी की नाशामणि नायिका की नागिनी समान चोटी में उलझ गई। महाराज श्री करुणासिन्धु जी कहते हैं कि प्रेम में निर्भर होकर कमलों के गेंद बना बना कर इधर से सखियाँ और उधर से सखाओं के साथ कौतुक-प्रिय लाल जी परस्पर में मारामारी कर रहे हैं।

† रसिक जन उस युगल विहार रस का आस्वादन करने के बाद अमृत-समुद्र की भी निन्दा करने लगते कि यह उस रसके सामने क्याहै ?

१ आनन्द रूपी लता। २ नृत्य करती हुई जल क्रीड़ा करने चलीं ३ घुस गईं। ४ नदी। ५ जल। ६ यहाँ तलहत्थी कमल और बाहु कमल की डंडी है। ७ नागिनी। ८ कौतुकी। ९ सूर्य। १० मेरी बुद्धि भवसिन्धु में डूबी हुई है। ११ रस का जैसा स्वरूप है।

॥ काव्य छन्द ॥

नीर[1] तीर पुर[2] मध्य भवन एक अति विचित्र[3] वर।
विविध रंग मनि जटित[4] एक रस दिव्य[5] दिव्य तर॥
अति विस्तर अति उच्च स्वच्छ अति अति प्रकाश कर।
लाड़िली लाल बिहार कहै को रस विलास[6] घर॥ १॥

दो०—दशधा[7] चौथ[8] समेत वर, लहत चतुर[9] पद दास।
† दीन चोर मनि हाटकहु, बेचे सहित हुलास॥ १॥
* परख हीन चष मनि लियो, कृपिनि सूर के तीर।
हंस भोग बक चुनि गयो, मरै पेट की पीर॥ २॥

इति श्रीरसमालिकायां बोध शास्त्रे परम स्थाने सुचनिका श्रीरासमण्डल संज्ञा वर्णनं नाम तृतीयोवकाशः।

---

† कंगाल चोर मणि और स्वर्ण भी पाले तो उन अनमोल वस्तुओं का कदर न करके उन्हें कौड़ियों के मोलमें प्रसन्नता पूर्वक वेच डालता है। वैसे ही पैसे के लोभ से रहस्य कथा बाँचने वालों को समझिये।

* कोई कंगाल था। किसी दानवीर के निकट याँचना करने पर उसे मिली मणि। जौहरी वाली मणि पहचाने की आँखें तो उसे थीं नहीं। मोती तो हंस का भोजन है। उसका नकल करने वाला बगुला उसकी देखा देखी मोती खा गया पचा नहीं सका। पेट की पीड़ा से मर गया। तत्व वेत्ता दानवीर और हंस हैं। अनधिकारी है कृपण और बक।

१ श्री यमुना तट। २ श्री वृन्दावन के बीच भाग में। ३ रंग विरंग मणियों से चित्रित। ४ नग जड़े। ५ दिव्य से भी दिव्य। ६ रस मय सुखोपभोग का महल। ७नवधाके बाद दशवीं प्रेमाभक्ति। ८ चौथी मुक्ति सामीप्य। ९ सारे लोक सुखों से तीव्र वैराग्यपूर्वक युगल किशोर में अहेतुकी अनुराग चाहने वाले।

ॐ अथ अवकाश ४ ॐ

ॐ काव्य छन्द ॐ

तेहि[1] पुर पर[2] इक धाम परम परि[3] परम रम्य[4] अति।
यह कहि चुप होइ रहे आइ गयो इष्ट ध्यान गति[5] ॥
लगे जगावन वेद सोइ कम रहे दया निधि।
जय निर्गुन[6] गुन[7] राशि विरुज[8] अज[9] रहित द्वैत[10] विधि॥१
जय अनन्त भगवन्त अंत[11] अन्तक भूमण्ड[12] धर।
जय अखंड पुट अंड एक फण भव[13] सुखण्ड[14] कर॥
जय तुरीय[15] विज्ञान सर्व गो तीत[16] सर्वगत[17]।
जय सुभक्ति मणि शीश[18] राम आज्ञा अखण्डमत[19] ॥२॥
जय चिद्रूप[20] अनूप ध्यान रस सिंधु[21] मगन नित।
जय कृपालु हम हेतु कहहु सुख मूल दीन हित[22] ॥
प्रेम भरे चष खुले सहस मुख राम नाम धुनि।
† सुमन ऋचा श्रुति चारि वर्षि अति प्रभु अनंद सुनि॥३॥

---

† चारों वेदों ने वेद मंत्र रूपी पुष्पों की वर्षा आप पर की।

१ उस बृन्दावन से। २ ऊपर। ३ सबसे ऊँचा। ४ रमणीक। ५ समाधि लग गई। ६ मायिक त्रैगुण से रहित। ७ दिव्य गुणों के भंडार। ८ रोग-शोक रहित। ९ अजन्मा। १० निज-पर विचार से परे। ११ काल को भी नाश करने वाले। १२ ब्रह्मांड को धारण करने वाले। १३ जन्म मरण। १४ मिटाने वाले। १५ जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति से भी परे चौथी अवस्था। १६ समस्त इन्द्रियों से अगोचर १७ घट घट व्यापक। १८ उत्तम भक्तों में शिरोमणि। १९ आपका सिद्धांत है कि खंडन न होने पावे। २० ज्ञानमय। २१ युगल विहार भावना में सदा डूबे रहते हैं। २२ गरीबों के हित चिंतक।

कर जोरे श्रुति चारि देखि आरत अधिकारी ।
प्रेम सहित बैठाइ अमिय[१] मय शब्द उचारी ॥
धन्य धन्य दुहुँ[२] ओर लषन कहि सुनहु निगम वर[३] ।
कहत लाज[४] मोहि लगे बचन गो कर्म तीत धर[५] ॥ ४ ॥
मन बुधि चित गुन[६] प्रकृति तत्व[७] जहँ एकौ नाहीं ।
त्रिकुटि[८] गगन[९] धुनि तेज शब्द[१०] सब बीचहि माहीं[११]॥
तहँ नहि जोग विराग ज्ञान विज्ञान भोर[१२] नहिं ।
†छर अछर गुन[१३] अगुन तुरीष सम काल चोर नहिं ॥५॥
विद्या अविद्या नाहिं द्वैत अद्वैत न तँहवा ।
बहुत बात को कहे मुक्ति चारिउ नहिं जहँवा ॥
पंचम मुक्ति विहार मइ तहँ कृत[१४] अनन्द विधि ।
कहेउ अनूठी बात कहहु केहि मिले[१५] कृपा निधि ॥ ६ ॥

---

† इसका भाव परिशिष्ट में देखिये ।

१ अमृत के समान । २ वक्ता और श्रोता भी । ३ भक्त-श्रेष्ठ चारों वेद । ४ गोपनीय युगल विहार लीला को खोलकर कहने में संकोच है । ५ श्री साकेत के श्री कनक भवन मन, बचन, कर्म से परे हैं । ६ मायिक त्रैगुण । ७ मायक पंच तत्त्व ८ दोनों भौहों के बीच दृष्टि निरोध कर योगि जन जिस ब्रह्म तेज का साक्षात्कार करते हैं । ९ अनाहत नाद १० देखिये अवकाश १२ मे । ११ ये श्री साकेत धाम के नीचे ही रह जाते हैं । १२ मोह रूपी रात्रि जहाँ होती है, वहीं ज्ञान विज्ञान का भोर होता है । १३ ब्रह्म के सगुण निर्गुण स्वरूप १४ युगल विहार सुख का रसास्वादन ही वहाँ के नित्य कर्म हैं । १५ वह धाम किसे प्राप्त होता है ?

श्रीमुख[1] मो सन कहेउ सहस जन मह एक साधक।
साधक अयुत[2] मंझार सिद्ध एक कोउ बिन बाधक॥
लक्षि[3] सिद्धि कोउ सकृत[4] ब्रह्म तत्वहि चित आवै।
तेहि दस लाखहु क्वचित[5] एकादश[6] भक्तिहि पावै॥७॥
दशधा[7] बेधी[8] भक्ति एकादश जेहि उर आवै।
पंचम[9] लहै विलास सखी गति तेहि[10] पुर जावै॥
भक्ति विविध[11] मत निगम[12] एक ते एक बड़ी है।
आपहि सब होइ जाइ जहां वह भक्ति मंड़ी है॥८॥
‡ सब कीन्हे वह नाहि वाहि कीन्हे सब तोषै।
मूल सींचि सब डारि बदन इन्द्रिन ज्यों पोषै॥
† भक्ति मुक्ति सब धाम प्रगट सब कहत धरा धर[13]।
छिपी छिपी मैं कही वरजि वर गुरु सदा कर॥९॥

---

‡ परा भक्ति से विभूषित हो जाने पर नवधा, प्रेमा आदि सभी भक्तियों के गुण स्वतः आ जाते हैं। सभी भक्तियों को प्राप्त कर लेने पर ऐसा निश्चय नहीं समझिये कि परा भक्ति सिद्ध हो ही जाय, परन्तु पराभक्ति प्राप्त कर लेने पर और सभी भक्ति मिल जाती हैं। जैसे वृक्ष की जड़ में जल सींचने से डाल, पत्ते सभी हरे भरे हो जाते हैं और मुख में ग्रास डालने से सभी इन्द्रियों का पोषण हो जाता है।

† पराभक्ति सभी भक्तियों का निवास स्थान है ऐसे ही पाँचवी मुक्ति में शेष सभी मुक्तियाँ अन्तर्भूत हैं।

१ स्वयं श्री राघवेन्द्रजू। २ दस हजार। ३ लाख। ४ एक। ५ कोई विरले। ६ परा भक्ति। ७ प्रेमा भक्ति। ८ पार करके। ९ पाँचवी मुक्ति सखि-जन-सुलभ सुख। १० श्री साकेत। ११ अनेकों भेद उपभेद। १२ हे वेदो! १३ शेष।

*** दोहा ***

*एकै चन्द्र चकोर बहु, काज बहुत घर दीप।
स्वाति अचारज वचन झरि, श्रोता चातक सीप॥ १ ॥
‡ मन पूरन सबको भयो, अन्त न पायो कोय।
राम चरण जेहि जस तृषा, पियत गंग जल सोय॥

इति श्री रस मालिकायां बोध शास्त्रे ध्यान स्तुति
प्रश्नोत्तर भक्ति नाम चतुर्थोवकाशः ॥४॥

---

* प्राप्ति योग्य पराभक्ति एवं पांचवी मुक्ति कैसे यथेष्ट हैं ? जैसे चन्द्रमा तो एक ही है, पर वह बहुत से चकोरों को तृप्त करता है। घर में दीपक एक ही होता है, जिसके प्रकाश में गृह से बहुत से कार्य बन जाते हैं। पुनः जब आचार्य की वाणी स्वाती बूंद सरीखी बरस जाती है, तो उससे श्रोताओं में कोई तो पपीहे की भांति स्वयं तृप्त होते हैं, कोई सीप की भाँति परार्थ मोती रूपी काव्य प्रसव करते हैं।

‡ श्री जानकी रमण जू के विहार चरित्र के रसास्वादन से पान करने वाले सभी कृतकृत्य हो जाते हैं, पर वह चरित्र ऐसा अपार है कि कोई उसकी इति नहीं पा सका। गंगा में जल तो अपार है, पर पीने वाले की जितनी प्यास है उतना ही पियेगा न ?

✱ अथ अवकाश ५ ✱

॥ रोला छन्द ॥

सुनहु निगम तुम साधु ब्रह्म गति[1] तुम जानहु जस।
सन्तनि की यह रीति जानि पूछहिं पीवहिं रस॥
तुम्हरे बल मुनि अमित सन्त शिव आदि भजहिं हरि।
भक्ति सच्चिदानन्द कहौं घर सुनहु चित धरि॥ १॥
तहँ न सखा नहिं दास पुरुष परि[2] वर्ग न तहँवा।
पुरुषोत्तम[3] एक आप सखी सेवा महँ जहँवा॥
अमित निकेत[4] विचित्र[5] चित्र उपमा न देइ को।
रसिक विवेकिन मांझ वरनि वर हानि[6] लेइ को॥ २॥
‡ सो उपमेय अनूप अपर उपमा खद्योत रवि।
परा[7] शब्द बल[8] क्वचित[9] देहि सुख हेतु साधु कवि॥
दिव्य दिव्य तर दिव्य स्वच्छ अति धवल धवल तर।
✱ मनि अचिंत महि भवन सरित तरु विहगि भ्रमरिवर॥३॥

---

‡ वहां के मणि महल के लिये दूसरी उपमा कैसी है जैसे सूर्य के सामने जुगनू।

✱ वहाँ की भूमि, महल, श्री सरयू जी, वृक्ष, पक्षी और भ्रमर सब ऐसे मनोहर दिव्य हैं कि प्राकृत-बुद्धि से उनका चिंतवन अगम है।

१ रहस्य। २ जाति। ३ वहाँ एक मात्र पुरुष श्री जानकी वल्लभ जू हैं। ४ महल। ५ रंग विरंग की मणियों से चित्र विचित्र जटित। ६ अपयश। ७ परावाणी श्री प्रिया जू की कृपा रूपा है। ८ उसी के सहारे। ९ यत्किंचित।

सदन कोष[1] को कहै विविधि रचना सब न्यारी[2] ।
‡तहँ अनन्द रस रासि एक रस कृत प्रभु प्यारी ॥
घर घर अकह[3] वितान[4] ब्रह्म[5] मनि चौक[6] रची है ।
† कदलि कुंभ मनि मिलित सखिन रचि आदि पचीहै ॥४॥
महल शृंग मनि[7] भृङ्गि[8] विहंगि[9] विधि[10] गुंजहि कूजहि ।
नाचति चित[11] अनुहारि वचन करि[12] स्वामिहि पूजहिं ॥
वीथिन दिव्य सुगंध रसत[13] रस खानि एक रस ।
अद्भुत सकल बनाव कहत नहिं बनै आहि जस ॥ ५ ॥
पुरिय[14] नाभि तरु कल्प वेलि आयत[15] विशाल तस ।
भक्ति[16] कृपा जड़ कंध डार त्वक परन फूल रस ॥
परम ईश अनुकूल मधुपि मधु मत्त सन्त जस ।
सघन ललित रस श्रवति[17] दिव्य निंदत अनंत रस[18] ॥६॥

---

‡ श्री प्रिया प्रियतम जू द्वारा रचित एक रस नित्य रासोत्सव वहाँ का परमानन्द सुख भोग है ।

† मांगलिक सजावट के लिये सखियों ने मणियों के केला थंभ तथा कलश आदि की रचना करके उनमें यथा योग्य पच्चीकारियाँ भी की हैं ।

१ समूह । २ विलक्षण । ३ अनिर्वचनीय । ४ चंदोवा । ५ कौस्तुभ । ६ रेखांकित मंगल चित्र । ७ मणि रचित कृत्रिम । ८ भौंरे । ९ पक्षी । १० असली की भाँति । ११ श्रीप्रियतमजू की रुचि अनुकूल १२ अपनी बोली के ही द्वारा । १३ सींचे हैं । १४ पुरी के मध्य में । १५ जैसा विस्तार वैसी ऊँचाई । १६ भक्ति और कृपा तत्वों के बने हुए । १७ चूता रहता है । १८ अन्यत्र के अनंत भाँति के रस इसके सामने फीके हैं ।

तेहि तर मंडप एक महा रचना अभूत[१] मनि।
अजर[२] रतन के खंभ चित्र चित्रैक[३] रूप धनि[४] ॥
मंडप तर चंदोव कोटि रवि शशि द्युति[५] कारे।
‡ दाम दिव्य मुक्तालि ध्रुवहु जनु वन्दनि वारे ॥ ७॥
सुठि[६] अद्भुत मनि कलित[७] केतु[८] शुभ ध्वजपताक छवि।
† अंड कोटि द्युति दीप करै किमि जहँ प्रकाश रवि॥
तर[९] वेदिका अनूप चित्त[१०] हर मानिक[११] लागे।
परम रुचिर जगमगित जहां शिव शिवा[१२] नुरागे ॥८॥
सिंहासन तेहि उपर आपु सम आपु बन्यो है।
तासु तेज रवि कोटि दाम[१३] शशि कवन[१४] गन्यो है॥
सिंहासन के मध्य लच्छि[१५] दल कमल प्रकाशित।
दिन[१६] मनिपूरन[१७] कलालच्छि[१८] निशि[१९] मनिकहँहाँसित[२०]

---

‡ मोती मालाओं के समूह वन्दनवार रूप में लगे हैं। एक एक मोती ऐसा प्रकाशमान है मानो ध्रुव तारा हो।

† करोड़ों ब्रह्मांड को प्रकाशित करते हैं। इनके लिये सभी उपमाएँ ऐसी हैं जैसे सूर्य के आगे दीपक।

१ अपूर्व। २ जो पुराना नहीं हो। ३ चित्रकार। ४ कामदेव। ५ प्रकाशक। ६ सुन्दर। ७ रचित। ८ चिन्ह वाला पताका। ९ उस मंडप के नीचे। १० मनोहर। ११ लाल रंग की मणि। १२ श्री शिव पार्वती भी इसके ध्यान में अनुरक्त रहते हैं। १३ बिजली। १४ किस गिनती में हैं? अर्थात् सिंहासन के तेज के सामने मंद हैं। १५ एक लाख दल वाला। १६ सूर्य। १७ पूर्णमासी के षोडश कला पूर्ण (चंद्र) १८ लाखों। १९ चन्द्रमा। २० अपने प्रकाश के आगे इन्हें न्यून जान कर इन्हें हँसते हैं।

*त्रय मुद्रा तेहि उपर दिव्य कृत मंडल रूरे।
तेज प्रकाश अनूप महा अमृत[१] मनि पूरे ॥ ६ ॥

॥ सुगन्धा छन्द ॥

तासु मध्य[२] आसीन[३] भक्ति महारानी[४] जू।
दहिने सुअंग परमीश[५] जुगल छवि[६] खानी जू ॥
वरनन लगेउ स्वरूप राग[७] मंगल करि।
सहसों शिर माहि नाइ चरण[८] रज हिय धरि ॥ १ ॥
†शिर चन्द्रिका किरीट अमित शशि रवि छवि।
जनु शशि रस कहँ पियति वेनि नागिनि कवि ॥
हंस[९] बंधु मुख लुब्ध[१०] अलक[११] अलि अलि[१२] जनु।
भृकुटी कुटिल[१३] छवि हरै कोटि मनसिज[१४] धनु ॥ २ ॥

---

* कमल कर्णिका पर श्री राम नाम के कार्यरूप, अग्नि, सूर्य और चन्द्र तत्व वाली क्रमशः लाल, शुभ्र और पीत रंगकी तीन गोलाकार रेखाओं की मुद्रा बनी है।

† चन्द्रिका की शोभा असंख्य चन्द्रवत तथा क्रीट की असंख्य सूर्यवत है। चन्द्रिका में संलग्न वेणी और चूड़ामणि ऐसी फबती है मानो नागिनी और शुक्राचार्य चन्द्रमा का अमृत पान कर रहे हों। यहाँ चन्द्रिका को चन्द्रमा, वेणी को नागिनी और चूड़ामणि को कवि अर्थात् शुक्राचार्ग से उपमाएँ दी गई हैं।

१ चन्द्रमणि। २ कमल कर्णिका स्थित सिंहासन पर। ३ बैठीहैं। ४ श्री राघव-प्राण वल्लभाजू। ५ परात्पर ब्रह्म श्री कौशलेन्द्र कुमार जू ६ दोनों मनहरण रसिया सौन्दर्य लावण्य निधान हैं। ७ मंगलाचरण। ८ उस स्थल के रज में इष्ट चरण रज का भाव करके उसे हृदय में लगाया। ९ सूर्य मित्र अर्थात् कमल। १० लोभायमान। ११ अलकावली, केश। १२ मानो भ्रमरों की पंक्ति हो। १३ टेढ़ी। १४ काम धनुष।

दिव्य जलज[१] सम नयन श्रवण[२] लगि सोहही ।
जेहि चितवनि की कृपा सुजन जिय[३] जोहही ॥
करण फूल मनि कनी[४] बनी अवरनि[५] गति[६] ।
त्रिपुल[७] दिवस निशि[८] राज छपहि विन्दुन[९] प्रति ॥ ३ ॥
जुगल वदन[१०] छवि[११] धाम कोटि शशि छवि इमि ।
‡ मानिक मनि ढिग पोत होत द्युति त्यों जिमि ॥
† तिलक अधर रद विंव हास अदभुत लसै ।
जनु घन रवि शिशु जलज पेट दामिनि बसै ॥ ४ ॥
* बेसर स्वच्छ बुलाक अधर पर हलकई ।
जनु बृहस्पति विवि शुक्र हृदय शशि ललकई ॥
चिबुक कपोल अमोल गरे[१२] मुक्तावलि ।
राम चरण छवि अलख[१३] लखहि संग की[१४] अलि ॥ ५ ॥

---

‡ मुख–शोभाके समाने करोड़ों चन्द्रमा ऐसे प्रभाहीन मालूम पड़ते जैसे मणि माणिक्य के सामने कांच (शीशा) की चमक फीकी लगे ।

† श्यामल ललाट पर तिलक ऐसा प्रतीत होता है मानों बादल पर वाल-सूर्य हो । हास से विंवाफल के समान अधर के बीच दंत पंक्ति ऐसी शोभती है मानों लाल कमल के मध्य विजली बसी हो ।

* वेशर और नाशामणि डोलती हुई ऐसी फबती हैं मानों दो चन्द्रमा के मध्य बृहस्पति और शुक्राचार्य ललक रहे हों ।

१ कमल । २ बड़े बड़े नयन कान तक फैले हैं । ३ हृदय से चाहते हैं । ४ छोटे छोटे टुकड़े । ५ न्यारे । ६ रूप रंग । ७ असंख्य । ८ सूर्य चन्द्रमा । ९ कर्णफूल स्थित मणि के टुकड़ों पर । १० मुख । ११ शोभा के निवास । १२ गलेमें । १३ ध्यानमें अगम । १४ सहचरी भाववाले ।

परम रुचिर[1] अंगद[2] कंकन मुद्री[3] धर।
‡ शोभा छवि सुश्रृंगार सुभग तिन कर घर॥
हार बीच वैजंति पदिक उर पर बनु।
† घन जुग मंडल नषतहि शशि मंडल जनु॥ ६॥
सारी किनारी जनेऊ अमर[4] धनु कहँ हँसै।
+ जगु दामिनि कै दमकि जमुन बिचथिर लसै॥
कटि[5] अवरन पट[6] दिव्य उभय[7] तन में फबै।
सब छवि अलख अनूठि तुच्छ उपमा सबै॥ ७॥
नाभि दिव्य द्विज[8] राज अमीहृद[9] अलि[10] जिमि।
रवि नन्दिनि[11] छवि भ्रमर[12] करैं छवि तहँ किमि॥
त्रिवलि[13] रेख छवि सींव[14] सूत्र किंकिनि फबि।
※ मनहु महा छवि छेकि हँसति त्रिभुवन छवि॥ ८॥

---

‡ मानो शोभा, सुन्दरता और शृङ्गार के थे युगलकिशोर घरही हों।

† लाडिले जू का श्यामल वक्षस्थल मानो बादल है। मणि-माला और वैजन्ती माला उस पर मानो दो तारा मंडल हैं। पदिक उस बीच में मानो चन्द्र मंडल है।

+ श्री प्रिया जू की नीली साड़ी में मणितार-जटित प्रकाशमान किनारी मानो यमुनाजल में विजलीकी छटा स्थिर होकर प्रतिविंवितहो।

※ ये रेखायें मानो उदर की महान शोभा की सीमा बांध कर इसके आगे तीन लोकों की शोभा को मंद बता रही हों।

१ सुन्दर। २ बाहु—भूषण। ३ अंगूठी। ४ इन्द्र धनुष। ५ कटि-वस्त्र। ६ चादर। ७ प्रियाप्रियतमजू दोनों के। ८ चन्द्रमा। ९ अमृत कुण्ड। १० रोमावलि मानो भ्रमरावलि है। ११ यमुना जी। १२ जल में आवर्त (भौंर)। १३ उदर की तीन रेखायें। १४ शोभा की सीमा।

कटि पर वर[१] पट एक जुगनु शोभा असि।
† मरकत गिरि उर तड़ित मनहु पूरन शशि॥
‡ विधु[२] मधु गंडहि[३] मंडि चरण नूपुर धुनि।
जनु अलि स्वरन कंज पर रटत पुही[४] गुनि ॥ ९ ॥
नख मयंक[५] सुत लाल वनज[६] दल पर लसै।
मनहु स्वेत[७] अलि मौन[८] पियत अनुभव रसै॥
कोटिन विमल निशेश[९] नखन प्रति वारिये।
जावक अनुपम अमल तड़ित[१०] द्युति कारिये ॥१०॥
पग तल[११] अमृत सिन्धु चिह्न[१२] तेहि चर जनु।
कोई सखि जनु जिय[१३] मीन पीन[१४] तेहि रस पनु॥
हनुमत शिव शुक सनक हमौं पाचों सखी।
रहहिं सदा प्रभु निकट करहिं आज्ञा लखी[१५] ॥ ११ ॥

---

† श्यामल शरीर मर्कत मणि का पर्वत, पीताम्बर मानो पर्वत के मध्य भाग में स्थित बिजली है और जुगनू (पदिक) मानो वहाँ पर पूर्ण चन्द्र है।

‡ यहाँ श्री प्रिया जू के श्री चरण को पीत कमल तथा नूपुर को भ्रमर माना गया है। नूपुर ध्वनि क्या है मानों भ्रमर के मुख में अमृत भरा हो।

१ पीत धोती। २ अमृत। ३ कपोल अर्थात् मुख। ४ डोरे में गूँथा हुआ नूपुर। श्लेषार्थ-श्री प्रिया गुण गानसे युक्त भ्रमर। ५ छोटे चन्द्रमा। ६ कमल। ७ उजले रंग का भ्रमर। ८ रसानुभव के लिये मौन होकर। ९ चन्द्रमा। १० बिजली समान प्रकाशक। ११ तलवा मानो अमृत समुद्र हैं। १२ चरण चिह्न मानो उस समुद्र के जलचर हैं। १३ मन ही मानो मछली हैं। १४ अनन्य भाव से उसी में तल्लीन रहने से पुष्ट बना है। १५ रुख देख कर।

सकल चिह्न हिय बसहिं प्रगट एकै[1] दुई।
सेवि[2] धर्म यह परम रहहिं पिय मन[3] छुई॥
लाडिली लालन तनु छवि सम उपमा इमि।
‡रवि ढिगि अमित खद्योत दीप द्युति हत जिमि॥१२
मानिक मनि जहँ पोत[4] गुंज[5] द्युति[6] किमि जगे।
कोटिन सर[7] हरि सर[8] सम कहत लज्जा लगे॥
जुगल रूप द्वै द्वै कर कमल[9] सचल[10] सर।
रामचरण किमि कहै कृपिन[11] सुर पुर[12] घर॥ १३॥
दो०-सूजी[13] मग गज चलत है, यह अन[14] कहनी बात।
*जनमति अगम पपीलरस, सुरतरु फल कहँ खात॥१
†पदुमासन सब सखिन के, दल प्रति लखव हजार।
रामचरण पिय टहलमें, जेहिसखि जस अधिकार॥२॥
इति श्री रस मालिकायां बोध शास्त्रे सर्वोपरि स्थाने स्थिते
शोभार्णवे ध्यानाद्भुते संज्ञा वर्णनो नाम पंचमोवकाश:।

---

‡सभी उपमाएँ ऐसी फीकी हैं जैसे सूर्य के सामने जुगनू और दीपक का प्रकाश।

*इसका भाव परिशिष्ट में देखिये।

†कमल के एक एक दल में एक एक हजार सखियों को अपने २ अधिकार के अनुसार सेवा के लिये प्रस्तुत बिचारिये।

१ एक ही दो का उल्लेख किया। २ स्वामी-धर्म। ३ मनोनुकूल। ४ काँच। ५ गुंजा, घुंघची। ६ कांति। ७ पोखरे। ८ क्षीर-समुद्र। ९ क्रीड़ा कमल कर कंज में। १० बाण फेर रहे हैं। ११ दरिद्र। १२ देव लोक के ऐश्वर्यवान महल। १३ सूई के छिद्र होकर हाथी निकल जाता है। १४ असंगत।

* अथ अवकाश ६ *

* मनोरम छन्द *

एक सहस कमल दल आसन[१] दश लक्ष[२] सखिन के आसन
रुचि[३] महल टहल अधिकारी, पिय सेज[४] सँवारनि हारी ॥
दल षोडश कमल रुचिर जहँ, सखि सोरह सहस मत्त[५] तहँ।
पट भूषण रचि[६] रुचि[७] लीन्हें, प्रभु नयन नयन[८] चितदीन्हें ॥
दल द्वादश कमल प्रकाशै, सोइ[९] सहस सखी पदुमासै[१०]।
लिहे पात्र[११] सुगंध न थोरे, तन चर्चित[१२] अम्बर[१३] बोरै ॥३
जहँ दल दश कमल प्रशंसी,[१४] दश सहस सखी तहँ हंसी[१५]।
बहु व्यंजन रचि रचि कीन्हें, भरे थार कमल कर लीन्हें ॥४
दल अष्टम कमल विचित्रा, तहँ आठ सहस सखि चित्रा[१६]।
सो निर्त्तत परम कलासी,[१७] पुनि गावहिं चित्त प्रकाशी ॥५

---

१ उत्तम आसन। २ प्रति दल पर एक हजार के हिसाब से। ३ यथा योग्य। ४ (यह शयन कुंज है।) ५ रूप एवं लीला रस में छक कर मतवाली। ६ सजा कर। ७ उत्तमोत्तम। ८ प्यारे के नयन में अपना नयन और चित्त अर्पण किये हुई। (यह शृङ्गार कुंज है।) ६ अर्थात् बारह हजार। १० लक्ष्मी जी के समान सौन्दर्य ऐश्वर्य युक्त। ११ इत्र दानादि। १२ अंगराग अनुलेपित। १३ वस्त्र सुगंध से सराबोर। (यह सभा कुंज है।) १४ प्रशंसा करने योग्य सुन्दरी। १५ हंसिनी के समान वाणी, चाल और नीर-क्षीर विवेचनी बुद्धि वाली। (भोजन कुंज)। १६ अति आश्चर्य रूप, गुण, चतुराई भरी। १७ (क) कला पूर्वक, (ख) प्रकाश स्वरूपा जिससे प्रियतम का चित्त-कुमुद प्रफुल्लित हो जाता है। (रास कुंज)

सखि षट दल कमल अनंदा,[१] धुनि[२] द्रवत श्रवत दिविचंदा।
गति[३] बाजन परम प्रवीना, रस गावहिं भोन नवीना[४] ॥६
दल चारिसहससखि श्यामा[५], सो तौ प्रभु मनको अभिरामा[६]
लिहे कज्जल रंग बहूरे,[†] जस[७] जोग तहाँ तस रूरे[८] ॥ ७ ॥
दल द्वै हजार कृपावति[९] कर चमर करैं मन भावति।
दल एक सहस करुनावति[१०], कर लीन्हे छत्र लडावति[११] ॥
इन्ह आदि[१२] अपरबहुदासी, निजनिज कृत[१३] चतुर[१४] प्रकाशी
‡ सखि अंगन प्रति रति कोटी, रमा रामचरण छवि छोटी ॥६

॥ हरिगीतिका छन्द ॥

बहु छत्र चामर व्यजन[१५] बहु ताम्बूल[१६] बहु लीन्हे खड़ी।
बहुरंग रंगित[१७] भाव रंग[१८] पराग बहु पात्रन लड़ी[१९] ॥

---

‡ एक एक अंग के सामने रति रमा की शोभा तुच्छ है।

१ प्यारे की आनन्द प्रदायिनी। २ इनकी संगीत-ध्वनि पर आकाश का चन्द्रमा पिघल कर अमृत चुआने लगता है। ३ नृत्य एवं यंत्र बजाने में। ४ नव यौवना। (महारास कुंज) ५ युवती। ६ रमाने वाली। † पुनः शृङ्गार सँवारने को, क्योंकि पसीने और प्रेमाश्रु से काजल धुल जाता है। ७ यथा स्थान। ८ सुन्दर। (शृङ्गार सँवारनकुंज) ९ कृपा रस पूर्ण। १० करुणा रस भरिता। ११ लाड प्यार कर रही हैं। १२ ये यूथेश्वरियां हैं। १३ सेवा में। १४ चातुर्य प्रगट करने वाली। १५ पंखा। १६ पान। १७ प्रेम भाव में रंगी हुई। १८ अबीर गुलाल। १९ माला।

बहु बसन भूषण पक[1] पय बहु सखिय कर अवरन[2] छड़ी।
बहु सुमन[3] सुमनज[4] सुमनरस[5] प्रिय सुमन गति पंडित[6] बड़ी
स्वर[7] स्वर[8] विविधकरस्वर[9] करन्हस्वरकरनि[10] लीन्हेवरबनी[11]
सुवरन परम सुवरन[12] सवै सुवरन[13] लिहे सुवरन[14] धनी॥
पुर चारु[15] चारि दुआरि पर बन चारि चारु बसंतनी[16]।
तरु वेलि तृण फल फूल परन[17] सुलसत[18] मय[19] चिन्तामनी

॥ राम मनोरम छन्द ॥

सब सखिय किशोर किशोरी, तहँ नित्य रचैं रस होरी।
‡ तरु दिव्य सुधा झरि लाई, पिय तन मन को अन्हवाई॥
तृण अरुण पत्र कोइ सोहै, वर धूप सुगंधन मोहै।
कोइ शेष जुगल तृण फूले, प्रिय दीप करहिं अनुकूले॥

---

‡ उस वसंत बन ने लाड़िली लाल जू का यों पूजन किया :— वृक्षों ने अमिय कण टपका कर प्रिय को स्नान कराया, मन में आह्लाद भर दिया। लाल और सुगन्धित पत्ते वाला तृण ही धूप का रूपक है। किसी तृण में केवल दो ही पुष्प हैं, मानो युगल भावना वाली युगल बत्ती के दीपक कोई नायिका कर रही है।

१ खोवे की मिठाई। २ आवरण के फाटक पर। ३ सुन्दर मन वाली फूल लिये है। ४ इत्र। ५ पुष्प सुवासित जल। ६ प्रिय के सुन्दर मन की रुचि परख लेने में बड़ी प्रवीण। ७ सुरीले कंठ से। ८ अनेकों तान लेती हैं। ९ वाद्य यंत्र। १० गायिकाएँ। ११ शृङ्गार सज्जित। १२ स्वर्ण से भी अधिक गौरांगी। १३ स्वर्ण पात्र। १४ सुन्दर श्याम वर्ण वाले की पत्नी। १५ सुन्दर। १६ सदा वसंत बहार वाले। १७ पत्ते। १८ सुशोभित हो रहे हैं। १९ चिंतामणि सरीखे इच्छित वस्तु दायक।

बहु झुकि भूः दिव्य फल लागे, नैवेद्य देत प्रभु आगे।
बहु बेलि फूल रचि नीके, कर आरति सिय पियजी के ॥३॥
तन मेघ तड़ित नख रूरी, लखि बोलहि नचहि मयूरी।
शुकि कोकिल सारसि बोलै, जनु बाजन बजत अमोले ॥४॥
अलि गावहि मनहु आरती, सुनि लाजहि कोटि भारती।
धुनि निर्त्तन्ह नख चपलाई, सुनि लखि पपीह रट लाई ॥५॥
शशि[1] मुखलखि शिथिल चकोरी, जिमिसंत हृदय[2] चखजोरी
सब एक रस दिव्य अनूपा, सखि रामचरण छवि[3] रूपा ॥६

३—वृक्षों की बहुत सी डालें भूमि तक झुक आई हैं। उनमें अत्यंत सुन्दर सुरसमय फल लगे हैं, मानो प्रिय के सम्मुख नैवेद्य अर्पण कर रही हों। बहुत सी लतायें भली भांति पुष्प सजा रखी हैं। मानों श्री प्रिया प्रीतम जू की शीतल आरती करती हों।

४ प्यारे का श्याम विग्रह को घटा, तथा सुन्दर नख को बिजली समझ कर मयूरी कूक मचाकर नृत्य कर रही है, मानो आरती कालीन नृत्य गान हो यथा सुग्गी, कोयल और सारस के बोल ही मानो उस समय के सुहावने बाजे बज रहे हों।

५—भ्रमरी का गुंजार ही मानो सखियों का आरती गान हो, जिसको सुनकर अनंत सरस्वती उसके सामने अपने कंठ स्वर को मंद जानकर लज्जित हो रही हैं। उस सम्मिलित कोलाहल को मेघ गर्जन एवं नृत्य कालीन सखियों के चंचल नख को बिजली जानकर पपीहे पिउ पिउ रटने लगे।

१ श्री प्रिया प्रियतम जू के श्रीमुख में चन्द्रमा की भ्रांति होने से। २ ध्यानावस्था में अन्तर्दृष्टि इष्ट स्वरूप में जुटी रहती हैं। ३ शोभा के मूर्तिमान विग्रह।

❋ हरि गीतिका छन्द ❋

‡ मनि श्रेणि बेनी बनी जनु अहिनी अनी मुक्तन कसी।
घन चीरि जनु शशि कुंड कहँ उड़ि चलिय झुकि रसकी रसी
भृकुटी कुटिल[1] अलि,कंज[2] चष, मुखइन्दु[3] सर विगासितमनो
विहँसित अधर रद हद छवि जनु[4] दाम शशि[5] भीतर बनो
जुग[6] वीर जनु तेहि[7] तीर कंचन[8] कमठ शिशु निकसे[9] बसे
मुख कंज पर बेसर मनहु चित लाल सित[10] अलि होइ लसे
को कहै छवि छाके रसिक मति मूक[11] भय रस[12] ते भरी।
प्रति अंग कोटिन वारिये जग[13] करनि रचक[14] लै[15] करी॥

---

‡ मोती समूह से अलंकृत चोटी मानो मणियों से युक्त नागिनियों का दल है। श्रीप्रियाजी का मांग क्या है, मानो बादल फाड़ कर बनाया मार्ग है। मुख ही मानो चन्द्रमा का अमृत कुण्ड है। रस में अनुरक्त होकर वेणी रूपी नागिनियाँ मानो उसी ओर के लिये झुक कर उड़ती आ रही हैं।

१ टेढ़ी भौहें मानो भ्रमरी हैं। २ नयन मानो कमल हैं। ३ वह कमल, मुख रूपी चन्द्र सरोवर में खिला हुआ है। ३ दंत पंक्ति मानो बिजली है। ४ मुख रूपी चन्द्रमा के भीतर। ५ दोनों कर्णफूल। ६ उस चन्द्र सरोवर से। ७ सोनहले कछुए के बच्चे। ८ मानो निकल कर बैठे हों। ९ प्यारे का निर्मल चित्त ही १० मानो श्वेत वर्ण वाला भ्रमर बनकर। ११ अवाक् रह गई। १२ प्रेम माधुरी से परिपूर्ण। १३ ब्रह्माणी। १४ लक्ष्मी जी। १५ पार्वती जी।

*** मनोरम छन्द ***

सब राहस[1] साज बनाये, बन विहरत सो[2] रस पाये।
बहु रंग के फूल उतारी, बनमाल गुहैं पिय[3] प्यारी ॥ १ ॥
बहु भूषण सुमन[4] बनावैं, रचि प्रीतम को पहिरावैं।
प्रभु निज कर फूल उतारी, बहु कंचुकि हार सँवारी ॥ २ ॥
सब सखियन को पहिरावैं, सखि फूलन माँग गुहावैं।
रचि सेत सुमन बहु सारी, सुचि रंग विरंग किनारी ॥३॥
प्रभु निज कर[5] वर पहिराई, मुख दिव्य[6] सुगन्ध लगाई।
सब दिव्य[7] अलंकृत सोहैं, रस रास वसंत[8] रच्यो है ॥४॥

॥ राग वसन्त ॥

खेलत वसंत लाड़िलो लाल,सुखसिन्धु उमगि आनन्दमाल।‡
बन अद्‌भुतअतिजहँनितवसन्त, प्रभु विहरतलीन्हेंसखिअनंत
† तन लसत स्वेत पट सुभग अंग, जनुबाल हंस वसबीचगंग
हँसि रंगविविध डारतकृपालु, जनु कुँद लतन्हपर बैठे*लाल

---

‡ मानो सुख रूपी समुद्र में आनन्द रूपी तरंगें उमग रही हैं।

† नायिकाओं के मनोहर गौरांग शरीर पर होलीके उपयुक्त सफेद वस्त्र ऐसे फब रहे हैं मानो गंगा की धारा में हंस के बच्चे बसे हों।

* गौर शरीर पर लाल अबीर ऐसा शोभता है मानो जूही की लता पर लालमुनिया पक्षी बैठे हों।

१ रास शृङ्गार। २ युगल किशोर। ३ एक दूसरे के लिये। ४ फूलों के। ५ मनोहर कर-कमल से। ६ नायिकाओं के मुखमें सुगंधित अंगराग लगाया। ७ "जे नित नूतन अमल सुहाये।" ८ वसंतोत्सव के उपलक्ष में रस वर्द्धक रास की रचना की है।

सबसखियसुमन लै विविधरंग, एकरचिवितानमोहित[1]अनंग
तर[2]सुमन सिंहासनरचि बनाइ, छविकहतकोटिशारद[3]लजाइ
तेहिपर सखियन बैठाय श्याम, लज्जित प्रतिअंगन्हकोटिकाम
तहँनाचतसखिकरिविविधिगान, धुधुकतमृदंगधधकतनिशान[4]
बीना तमूर[5] नेंदुर उपंग[6], रस भरिय भेरि[7] बाजत मुचंग[8]
नूपुर कंकन किंकिनी सुराल[9], गति थेइथेइथेइथेइउठत ताल
गावहिंअनूठि रागिनिरसाल, सुनि रसबस विहँसत उठेलाल
रसहेतु धरेप्रभु अमित रूप, एक ओर भई सखि छवि अनूप
पियओर चलहिं पिचकारिचारु, सखीओर अबीरनपरी मारु
भई कीच अगर कुँकुम सुरंग, सुख सिन्धु बढ़ेउ आनन्द तरंग
एकसखिय नामहेमा प्रवीन, चलिरस छलकरिप्रभु पकरिलीन
कोइहारपीताम्बरलियो छीन, कोइनिज[10]उरप्रभुउरडारिदीन
कोइचुंवतमुखलालन[11]लड़ाई[12], कोइहँसतपान[13]वत्सल[14]लगाई
मिलिप्रीतमसखि अह्लाद[15] रूप, रचिरामचरणराहस[16]अनूप

---

१ एक ऐसा मंडप बनाया जिसकी सुन्दरता देख काम भी मोहित हो जाय। २ उस वितान के नीचे। ३ सरस्वती। ४ एक प्रकार का बाजा। ५ तम्बूरा, तार वाला यंत्र। ६ तरह तरह के बाजाओं के नाम हैं। ७ नगाड़ा। ८ मुँह से बजाने वाला एक बाजा। ९ रसीला शब्द। १० अपना उरोज प्यारे के वक्षस्थल पर। ११ प्राण प्यारे जू का। १२ प्यार से। १३ प्यारे के (पाणि) कर कमल पकड़ कर। १४ अपने उरोज में। १५ आह्लाद रूपा श्री प्रिया जू। १६ रास।

※ अनंग शेषर छन्द ※

वराननी वराननांगगा मुदा विराजिता ।
कदा कुहुच्छपान्तरे किमुद्‌गता सुचन्द्रिका ॥
विदग्ध चारु नागर व्रतौरसिप्रिया क्वचि-
द्यथा नवीन नीरदैः समाश्रितौ सुभूधरौ ॥ १ ॥
सुराङ्गणा नराङ्गणा समीरपाङ्गना गणे ।
वराङ्गणा पदत्विषा विनिर्जिता सुभामिनी ॥
प्रिया प्रियेण विधृता प्रनृत्यती शुचिस्मिता ।
विलोल पादव्यन्यसत्पटांचला सुचञ्चला ॥२॥

१—मनोहर मुखवाली नायिका मनोहर मुख वाले प्रीतमजू के अंग में प्राप्त अर्थात् लिपटी हुई सुख पूर्वक विराजती है । ग्रन्थकार सन्देह करते हैं । क्या अमावस्या की अँधेरी रात में चाँदनी तो नहीं फैली है ? प्यारे के श्यामल विग्रह पर अँधेरी रात एवं गौर नायिका पर चाँदनी का आरोप है ।

रसिक, सुन्दर एवं चतुर प्रीतम जू किसी जगह श्री प्रिया जू के उरोजों पर विराजमान ऐसे लगते हैं, मानो दो पर्वतों को नये बादल ने ढक लिया हो ।

२—देव-कन्याएँ, नर-कन्याएँ, नाग कन्याएँ, एवं अन्यान्य उत्तमोत्तम नायिकाएँ अपनी चरण-कांति से बिजली की प्रभा को जीत रही हैं ।

श्री प्रिया जू प्राण प्यारे के करकंज पकड़ कर मंद मुस्कान पूर्वक नृत्य कर रही हैं । चंचलता पूर्वक चरण से नृत्यगति ले रही हैं । साड़ी का अंचल फहरा रहा है ।

* हरि गीत छन्द *

‡ मनो भूमिपर लगे नचन गति जगमगाति प्रति छांहीबनी।
जनु छवि शृंगार मनोज रतिलजि निचनिपगतर सजिग्रनी॥
मनि तरु लतन्ह जगमगिति जनु देखत चपल निर्पित नहीं।
सखि नचहिं मुद्राकार प्रभुविच[१] बीच करते कर गही ॥१
बहु ताल बाजहिं चरण चंचल मुरत[३] कर मुख चष छुए।
मुक्ता कलिय[४] नूपर खसे जनु अमिय[५] सर बहु शशि[६] उए॥
दहु ओर बाजन सखि बजावहिं रमसिंहा धुधु घद्ध धू।
भभ भेरि बज तड तड नफीर निशान धधकहिं डंक धू ॥२॥
सहनाई पिय पिय गुमकि गुम मृदंग झन झन झांझही।
तम्बूर जंग मुचंग करतालादि अनगन बाजही ॥
तरु सुमन वर्षहिं श्रम[७] अकर्षहिं सकल हर्षहिं रस भरे।
† सो लहहि जिन शृंगार रस भरि अपर रस बाहिर धरे ॥३॥

---

‡ मणिमय भूमि पर नृत्य करने से नायक नायिकाओं के प्रतिविंब भूमि के नीचे जगमगा रहे हैं, मानो शोभा और शृङ्गार, काम और रति इनकी शोभा के आगे लज्जित होकर चरणों के नीचे अपने दल सजकर आ जुटे हों (पदाश्रित होकर नृत्यकला सीखने के लिये)। पुनः मणि के कृत्रिम वृक्ष और लताओं में जब वे ही प्रतिविंब पड़ते हैं तो मानो उपर्युक्त दल रास शोभा अतृप्त होकर देख रहा हो।

१ अनेक रूपों से दो दो नायिकाओं के बीच। ३ भाव दिखाने के लिये कर मोड़ने के बहाने नायिका के नयन कपोल स्पर्श करते हैं। ४ दाने। ५ अमृत सरोवर के समान रास भूमि। ६ चंद्र (मोती)। ७ पुष्पों के शीतल स्पर्श से रास की थकावट मिट रही है।

† परिशिष्ट देखिये।

॥ हरि प्रिया छन्द ॥

श्रम[1] कन मुख सोहैं, कमल कोश[2] मोती जनु।
तेहि उपर अरुण[3] रज, परम अनूपम को भनु[4] ॥
मेचक[5] कच[6] अलि[7] जनु, कमल[8] बदन पर झुकिझिले[9]।
शशि[10] राहु मनहु दुइ, कुटिल[11] समर[12] तजि नइ[13] मिले॥१
रतनन भरि झारी, जल सुगन्ध सखि लीन्हे जू।
निज प्रभु मुख धोइ, सुख[14] मूरति चित दीन्हे जू॥
कोउ भुज[15] गहि ठाढ़ी, कोइ सखि अंग अँगोछै जू।
कोइ व्यंजन[16] करै कोइ, अंचल ते मुख पोछै जू ॥ २ ॥
कोइ कुंडल अलके[17], उरझि गई निरुवारे[18] जू।
कोइ मुकुट सुधारै, भूषण टूट सँवारै जू॥
कोइ कसहि[19] पीताम्बर, अंग सुगंध लगावै जू।
कोइ चवर ढुरावै, मधुर[20] मधुर कोइ गावै जू ॥ ३ ॥

---

१ पसीने की बूँदें। २ यहाँ मुख को कमल, पसीने की बूँद को मोती माना गया है। ३ अंगराग। ४ कौन वर्णन कर सकता है? ५ काले। ६ केश। ७ मानो भ्रमैर हों। ८ मुख रूपी कमल पर। ९ घुस पड़े हैं। १० मुख को चन्द्रमा तथा केश को राहु माना गया है। ११ केश के पक्ष में अर्थ 'घुँघराले' तथा राहु के पक्ष में 'कपटी'। १२ पारस्परिक लड़ाई त्याग कर। १३ नम्रता पूर्वक। १४ प्राणप्यारे जू की सुखदायिनी छवि में मन आसक्त है। १५ प्यारे की बाँह पकड़ कर। १६ पंखा। १७ केश। १८ सुलझाती है। १९ नृत्य काल में ढीला पड़ गया था। २० मीठे स्वर से।

सखियन के भूषण, निज कर लाल सुधारी जू।
फूलन रचि चौकी, सखि प्रभु कहँ बैठारी जू॥
कोइ चरण प्रक्षालै[1], धूप दीप करै प्यारी[2] जू।
छप्पन विधि भोजन, लाइ सखी न्यारी[3] न्यारी जू॥ ४
फलफूल मूल[4] दल[5], अमि निन्दक[6] बहु ल्यावैं जू।
प्रभु सखिन पवावहिं, सखिय देइ प्रभु पावैं जू॥
रस पाइ परस्पर, लैं आचमन सु पान जू।
करैं दिव्य आरती, बाजन ध्वनि धुनि गान जू॥ ५॥
एक सुमन सेज रचि, प्रीतम को पौढ़ाई जू[8]।
सखि पाय[9] पलोटहि[10], कुच पद परसि[11] लड़ाई[12] जू॥
हँसि हँसि सब माँगहि, रास दान पुनि दीजै जू।
प्रभु रामचरण उठि, जल विहार कछु कीजै जू॥ ६॥

---

१ धो रही है। २ प्यारी सखी। ३ निराली, अलग अलग थालों में सजा कर। ४ खाने के योग्य मोटी जड़, कन्द। ५ पत्ते। ६ अपने स्वाद के आगे अमृत के स्वाद को तुच्छ बताने वाले। ७ प्रेम जनित आनन्द। ८ शयन कराया। ९ चूरण। १० दबा रही हैं। ११ अपने उरोजों को प्यारेके चरणसे स्पर्श कराकर। १२ लाड़ प्यार करती है।

अगले पृष्ट के दोहे का अर्थः—चतुर रसज्ञ मर्मी को यदि एक ही सांकेतिक शब्द कह दिया जाय तो वह उसी से विभिन्न भांति के बहुत से आशय समझ लेते हैं। यहाँ श्री प्रिया प्रियतम जू के अनंत विहार लीला का अति संक्षिप्त संकेत मात्र है।

॥ दोहा ॥

कहत एक बहु लहत भिन्न, झूठे मुख पद आन।
विरही रटनि पपीह की, सोउ जल करै न पान ॥ १ ॥
जस पुनरोक्त न होत है, हरि सम्बन्धी बात ।
तेहि विधि लाड लडाइ सखि, अकह नेह को नात ॥२॥

इति श्री रसमालिकायां बोध शास्त्रे सखी सार्चनने बन बसन्तायांबे रस रास मंडनांद्भुते संज्ञावर्णनोनाम षष्टोवकाशः ॥६॥

---

१ पूज्य ग्रन्थाकार कहते हैं कि मैंने जो कुछ लिखा वह पूर्व रसिकाचार्यों द्वारा एवं स्वतः भी मानसी भावना द्वारा समाधि अवस्था की साक्षात्कार किया हुआ सत्य सत्य यथार्थ अनुभव है। झूठे के मुख पर तो जूते मारो। जैसे चातक पिउ पिउ की रट इसी लिये लगाता है कि उसे अनन्य भाव से केवल स्वाती की बूँद ही पान करना है, वैसे ही विरही की रटनि अनन्य भाव से अपने प्राण प्यारे के दर्शनों के लिये ही होती है।।

२ पहले कहे गये शब्द, वाक्य अथवा विषय दुवारे फिर कह डालना काव्य में 'पुनरुक्ति' नामक दोष माना जाता है। परन्तु भगवन्नाम, भगवच्चरित्र यदि वारम्वार कहे जायँ, तो इसे भजन मानकर इसमें वह पुनरुक्ति दोष नहीं लगाया जाता। वैसे ही एक वार रास हो चुका, सखियाँ पुनः वही रास दान माँगती हैं। यह वारम्वार का प्रेम रसास्वादन पुनरुक्ति दोष वर्जित है। प्रेम सम्बन्ध की बातें अनिर्वचनीय होती हैं।

❋ अथ अवकाश ७ ❋

॥ चंचरीक छन्द ॥

नाचत नट नागर सुख सागर[1] उमग्यो री ॥
† लालन मुख विमल इन्दु, मेचक उर चिवुक विन्दु।
सखि मुख चय विमल कंज, तजि गति विगस्यो री ॥
भृकुटि कुटिल[2] चंचरीक, थिरकत थिर रसिक लोक[3]।
गान बीच अलि[4] अलीक[5], तजि ढिग[6] निकस्योरी ॥
कर कर गहि ललिय लाल, झूमत गज मत्त[7] माल।
लचकत कटि ग्रीव[8] चरण, हिरि फिरि चल त्यौरी[9] ॥
† अलकैं ललकैं कपोल, कुँडल हलकैं कलोल।
जनु शशि उर रचि हिंडोल, राहु रवि झूल्योरी ॥ २ ॥

---

† प्यारे का श्री मुख मानो निर्मल चन्द्रमा है। चिवुक विंदु मानो चंद्र लांछन है। इस चन्द्रोदय से सखियों के मनोहर मुख, नयनरूपी कमल प्रफुल्लित हो रहे हैं। इन कमलों ने अपना सहज स्वभाव (सूर्य के साहचर्य से विकसित होना) छोड़ दिया है।

† प्यारे के कपोलों पर जुलुफ और कुण्डल आमोद पूर्वक झूल रहे हैं, मानो चन्द्रमा (मुख) के मध्य में झूला रचकर राहु (जुल्फ) और सूर्य (कुण्डल) झूल रहे हों।

१ मानो सुख रूपी समुद्र में बाढ़ आ गई। २ टेढी भौंह मानो भ्रमर हैं। ३ स्थिर प्रतिष्ठा। ४ कोयल। ५ (अपने कंठ स्वर से करने वाली) अप्रतिष्ठित। ६ प्यारे की समता छोड़ कर आगे बढ़ गई। ७ मतवाले हाथियों के दल की भांति। ८ गला। ९ चितवनि।

यहि[1] विधि गये सरयु तीर[2], तीर[3] पुंज[4] बन गंभीर[5]।
पुंज[6] सुमन पुंज भ्रमरि, गुंजत जन[7] ज्योरी ॥
जुग तट मणि मय पवित्र, चित्रित श्रेणी[8] विचित्र।
‡ प्रभु मन-भव जल सनेत्र, करुण रस भरयोरी ॥ ३ ॥
† नील रतन मानिक जनु, सेज शयन मामिक फनु।
जनु बन-भव प्रभु रवि अलि, रसन रट रस्योरी ॥
* सुमति कहति सूरति वलि, मूरति दिखराउ अचलि।
रामचरण जग तजि लखु, मौन भैसि क्योंरी ॥ ४ ॥

॥ हरि गीत छन्द ॥

पर हेलि[9] प्रभु मानस[10] ललिय, ललिलाल कौतूहल[11] रचो
जल केलि व्रीड़ा[12] व्रीड़[13] जहँ अह्लाद[14] क्रीड़ा कल मची ॥
जल जात[15] कर उच्छरित जल जल जात[16] फैंकहिअखिलचो
तेहि संग भ्रमरि उड़ाहि गुंजत देखि कवि[17] शारदनची ॥१॥

---

‡ श्री जानकी रमण जू के मन से प्रगट-नेत्र से प्रवाहित करुण रस ही सरयू में जल के व्याज से भरा है।

† श्री सरयू स्वरूप क्या है, मानो मणि पर्यंक (नीले लाल रत्नों के बने घाट) पर श्री शेष जी (सरयू प्रवाह) शयन कर रहे हों। प्रियतम रूपी सूर्य से खिले कमल ही मानो शेष फण हैं। रसज्ञा भ्रमरियों का गुंजार ही शेष जी का नाम रटन है।

* परिशिष्ट में देखिये। १ नृत्य गान करते हुये। २ किनारे। ३ तटवर्ती। ४ सघन। ६ ढेर के ढेर। ७ प्रेमी भक्त। ८ सीढ़ियाँ। ६ जलमें घुस पड़े। १० मानस सरोवर पुत्री सरयू जी में। ११ जलक्रीड़ा। १२ लज्जा। १३ मिटा कर। १४ आनन्द। १५ हस्त कमल से। १६ कमल। १७ कवि की उक्ति नाचने लगी, चमत्कृत भाव फुरने लगे।

‡ जनु पूर शशि टूटहि विथकि अहि बाल तेहि रस लूटही।
जनुस्वरन[1] संपुटवेष्टि[2] रस अलि[3] अलि[4] चपरि[5] लैजूटही
प्रभु लेत पुनि फैंकत लगत जनु अमिय[6] घट भरि फूटहीं[7]।
जिमि राम चरण हवाय[8] सिय[9] पुर कामरति कर[10] छूटहीं॥

॥ चंचरीक छन्द ॥

यहि विधि जल केलि हेलि[11] खेलत पिय प्यारी॥
उमगत आनन्द माल[12], हँसत धरत ललिय[13] लाल।
अधर अधर परसत[14], मुख दरसत सुषमारी[15]॥
† मिलित लाल अलक बंक, वेसरि अरु झेउतटंक।
अलि कच कुंडल बुलाक, अरुझेउ उपमारी ॥ १ ॥

---

‡ चन्द्रमुखी नायिका का कमल तोड़ कर प्यारे की ओर फेकना क्या है, मानो पूर्ण चन्द्रमा की कलायें (कमल) टूट टूट कर गिर रही हों। उन कमलों के पीछे दौड़ने वाले भ्रमर मानो काले सर्प के बच्चे (अहिवाल) उनके अमृत रस को लूट रहे हैं।

† श्री प्रिया जू के बेशर और कर्णफूल तो प्यारे की टेढ़ी अलकावली में उलझ गये। इधर श्री प्रिया जू के केशों में प्यारे के कुण्डल और नाशामणि उलझ गये।

१ कमल को तोड़कर पहले अंजली में भरती हैं, फिर फेकती हैं। यहाँ गौर अंजली मानो सोने के डब्बे हैं। २ बन्द। ३ सखियों के। ४ भ्रमरी। ५ शीघ्रता से। ६ अमृतका कलश। यहाँ उरोज से तात्पर्य है। ७ कमल का चूर २ होना। ८ आतश बाजी। ९ श्री लाड़िलीजू के नगर में। १० काम (प्रियतम) रति (सखियाँ) के हाथों से। ११ जल में प्रवेश करके। १२ समूह। १३ श्री लली जू को। १४ अधर पान के समय अधरों के पारस्परिक संस्पर्श। १५ मुख की अपूर्व शोभा दीखती हैं। उपमा आगे है।

जनु जुग[१] विधु चख[२] कुरंग, गुरु[३] द्वौ रवि अरि[४] अनंग,
अहि[५] रजु कसि बीच वैर, सब तजि सुख भारी।
बहु सखि निरुवारती[६], करताल हँसि[७] बजावती,
बहु व्यंग[८] राग गावती, मन भावति नहिं[९] न्यारी ॥ २ ॥
करते कर जोरि सकल, निर्त्तत जल ऊपर चपल,
चरन चलत छुवत[१०] छटकि, नूपुर रवकारी।
रत्नालंकृत[११] विचित्र, जगमग जल बिच[१२] पवित्र,
जनु घन[१३] दिवि तड़ित[१४] विपुल, दमकत[१५] दुतिवारी ॥३॥
छुम छुम थेइ थेइ तरंग, गावति पिय संग संग,
चलित लजित[१६] गज अनंग, बाजत करतारी।
अद्भुत राहस[१७] अनूप, देखहिं कोइ सखि[१८] स्वरूप,
राम चरण देखैं किमि, नयन अंध[१९] चारी ॥ ४ ॥

---

१ दो (मुख) चन्द्र। २ दो (नयन) मृग। ३ दो गुरु बृहस्पति (वेशर) शुक्र (नाशामणि)। ४ अड़े हैं। ५ नाग पाश (केश) ६ सुलझाती है। ७ मजाक करती हुई ताली बजाती है। ८ चुटकी लेने वाला। ९ नहीं चाहती कि सुलझ कर फिर अलग होवें। १० जल स्पर्श करते ही चरण को छटका लेती कि डूबे नहीं। ११ मणि रत्नों के चित्र विचित्र भूषण। १२ भूषणों के प्रतिबिंब। १३ मानो आकाश में श्याम बादल (नीली साड़ी) १४ बहुत सी बिजलियां (मणि भूषण)। १५ प्रकाश वाले चमक रहे हैं। १६ अपनी चाल से काम-हाथी को लज्जित कर रही हैं। १७ रास। १८ शृँगार भावना युक्त। १९ भीतर और बाहर की चारों आँखों से अन्धा।

नोट:—ऊपर वाले दूसरे पद की व्याख्या परिशिष्ट में देखिये।

❋ झूलना छन्द ❋

भक्ति[१] को रूप जल जात[२] अलि[३] हँसि गन,
रहत[४] जस लाल मन भजन ‡ बोलैं ।
कूल[५] दोउ रतन मय विविध तरु फूल मय,
राज[६] ऋतु नित्य घन परन[७] नोलैं[८] ॥
वहुत प्रभु संग बहु सखिय उपबन गई,
सुमन को लेत बन पुलिन[९] डोलैं ।
सखिन तरुवरन[१०] फूलन हिंडोला रचि,
विविधि विधि रंग के छवि अमोलैं ॥ १ ॥
कहति कोई लाल हम भली रचना करी,
कहति कोई स्वामि[११] हम भली बनाई ।
कहति कोइ देखि कै मोहिजै[१२] हो लला,
नयन के सयन[१३] सो कोइ लखाई[१४] ।
पानि[१५] धरि चलिय कोइ पीत पट धरिय कोई,
नृत्य के भाव कोई हँसि दिखाई ।
रामचरणार्ति[१६] करुणानिधे चरित[१७] कृत,
सबनि के झूलना चढ़ेउ जाई ॥ २ ॥

---

१ भक्ति रूपा सखियाँ ही । २ कमल । ३ भ्रमरी । ४ अपना वैसा ही स्वरूप बनाये रहतीं जैसा···। ५ किनारे । ६ बसंत । ७ सघन पत्ते । ८ नये । ९ तट । १० बड़े बड़े बृक्षों में । ११ हे प्राणनाथ जू! १२ मोहित हो जाँयगे । १३ इशारे से । १४ अपना रचा झूला दिखलाया । १५ हाथ । १६ महाराज करुणा सिन्धुजी कहते हैं कि आरत भक्तों के लिये जो करुणा के निधान हैं सो । १७ अनेक रूप धारण करने की लीला की । ‡ अपनी वाणी के द्वारा सेवा करती हैं ।

अयोध्या

*** राग मलार ***

झूलत लाड़िली लाल हिंडोले ।
नील सघन पल्लव तरु शोभित जनु वितान[1] घन माल ।
‡ गर्जहिं मधुर मधुर पिय मन लै कोकिलि शब्द सुरसाल ।।
बरसत मेह झरत तरु[2] अमृत बोलत मोरि[3] रसाल ।
ओसरयू उमगत उज्ज्वल जल लहरि उठत मानो जाल[4] ।।१
त्रिविधि पवन निन्दक मारुत[5] चलु पट फहरात सुलाल[6] ।
† पद कर भूषण तड़ित नखत शशि निन्दत धनु सुरपाल ।।
बहु सखि संग संग झूलति हैं बहुति झुलाबति बाल[7] ।
गावहिं मधुर लाल मन मोहैं करहिं विविधि रस[8] ख्याल ।।
मनहुँ मदन[9] रति के व्याहन कहँ साजि सकल निजताल ।
लाल विहार देखि बन भूलेउ बिसरि गयो सब हाल[10] ।।
यह रस राशि रसिक कोइ[11] सखिमोइ निशिदिनरहतिनिहाल
रामचरण यह छाड़ि कहै कछु कारिख तेहि मुख भाल ।।२।।

---

‡ प्यारे के मनोनुकूल कोकिल की सुरीली कूक ही वितान-बादल का गर्जन है । † झूलने के समय कर पद चंचल हैं । अतः वहां के मणि-भूषण, बिजली; नख, तारागण; मुख चन्द्रमा; वस्त्र की किनारी, इन्द्र धनुष; को हँसते हैं ।

१ मानो बादल ही बितान बने हों । २ वृक्षों से अमृत टपकना ही मानों बर्षा है । ३ मयूरी । ४ दर्शकों के चित्त फँसाने वाला जाल । ५ उस समय की वायु । ६ श्रीलालजू का । ७ नायिका । ८ मदनोद्दीपक कौतुक । ९ मानों काम चला है रति से व्याह करने । १० अपने विवाह की बात । ११ सखी भावना वाले रसिक संत ।

दो०—सिंहासन बन सदन रस, राहस कृत सखि प्रत्य।
आत्म एक जिमि सर्वघट, घट असत्य वह सत्य ॥१॥
वेद विदेहज मति भपो, पै* ऋपि शब्दातीत।
हति सन्देह पिनाक भरि, सुख सु त्रिगुण भटजीत ॥२

इति श्रीरसमालिकायां बोध शास्त्रे रास मंडल बन वर्णने रसार्णवे विहार संज्ञा वरननो नाम सप्तमोवकाशः ॥ ७ ॥

---

१ रसिक शिरोमणि जानकी रमण जू ने एक एक सखी के साथ एक एक रूप से सिंहासन पर, कभी बनों में, कभी महल के अभ्यंतर रसमय विहार किया। उतने रूप कैसे बना डाले? इस पर दृष्टांत देते हैं। अक्षर ब्रह्म तो एक ही हैं, पर जड़ चेतनात्मक अनंत शरीरों में व्यापक है*। अंतर इतना ही है कि पंच भौतिक शरीर नाशवान हैं किन्तु देही देह विभाग रहित सखी स्वरूप नित्य चिदानन्दमय है।

२ यों तो वेद वाणी अपौरुषेय है, अप्राकृतिक दिव्य बुद्धि द्वारा विवेचन की हुई है, परन्तु यह युगल विहार चरित्र तो वैदिक ऋषियों की वेद-वाणीसे भी परे हैं। युगल विहार भावना रूपा रसात्मिका भक्ति का साधन दृष्टांत द्वारा बताते हैं। श्र कौशलेन्द्र कुमार जू ने शिव-धनुष को तोड़ कर त्रिलोकी शूर वीरों पर विजय कर के तब आह्लादिनी रूपा श्रीजनक नन्दिनी जू को प्राप्त किया। वैसी से ही सभी संशयों को मिटाकर रज, तम, सत मायिक गुणों को जीते। वही दिव्य सुख पूर्ण उपर्युक्त भक्ति को पा सकेगा।

* अथ अष्टमोवकाशः *

* हरिगीत छन्द *

पर[1] ब्रह्म भक्ति[2] विहार अमृत[3] सिंधु सो नहिं कहि परै।
हनुमान शिव सनकादि शुक हम आदि कोटिन मुख ररै[4] ॥
‡ जिमि मेघ चातक सीप रट इक बुन्द लहि आनन्द भरै।
जिमि छुधित सुर तरु त्रिषित सुरसरि उदर भरिपुनिकहँधरै॥
† जिमि कृपिन कंचन मेरु लहि नहि उठत तहँ कछु लै मरै।
सुनि पुलक श्रुति तन भाव[5] सखि जलनयनमन आनन्दधरै
* जेहि सिन्धु पार न पाव गज जे भक्ति महि तर नहिं टरै।
तेहि रामचरण पपील पंगुल रास रस कैसे तरै ॥ २ ॥

---

‡ जैसे पपीहा और सितुही स्वाती बादल के रटन तो बहुत लगाते, पर तृप्त हो जाते एक ही बूँद से। यदि भूखे को कल्पवृक्ष मिल जाय और प्यासे को गंगा, तो बताइये पेट ही भर तो खायेंगे पियेंगे न ? पेट से फाज़िल रखेंगे कहां ? वैसे ही जिसमें जितनी धारणा शक्ति है, उतनी ही युगल विहार लीला अनुभव कर पाते।

† जैसे किसी कंगले को सोने का सुमेरु पहाड़ मिल जाय और सर पर उठने भर से अधिक बोझा लाद ले, तो पिच कर मर ही तो जायगा।

१ श्रीकौशलेन्द्र नन्दनजू। २ श्रीमिथिलाधिप राजनन्दिनी जू। ३ अमृत के समान स्वाद, सुख और अमरत्व देने वाले रस का समुद्र। ४ वर्णन करते रह जायँ। ५ श्रोता बने हुये वेद सखी भावना में आविष्ट होकर।

* दिग्गज पृथ्वी को सभी ओर से थामें रहते हैं। पृथ्वी का बोझ गरु अनुभव करने पर भी वहाँ से टलते नहीं। ऐसे ही महान

दो०—नभग नाथ लघु चींटि गज, सुरसरि हरि यश पाइ।
अल्प दीर्घ कवि पान करि, सबके तृषा बुझाइ ॥१॥
सरि त्रिशंकु[1] रबि[2] जादि मिलि गंग अग्र[3] फल एक।
हरि मिलि भाषा संस्कृत, हरत पाप अविवेक ॥ २ ॥

इति रस मालिकायां बोध शास्त्रे वक्तार्ति
रसार्णव दर्शनं नाम अष्टमोऽवकाशः ॥८॥

रसिकाचार्य भक्ति का वजन सम्हाले रहते हैं। परन्तु श्रीजानकीरमण जू का रसरास लीला तो अपार समुद्र है। उसे वे भी पार नहीं पाते। तहां ग्रन्थकार कार्पण्य पूर्वक कहते हैं कि हमारे सरीखी लँगड़ी चिउँटी कैसे तैर सकेगी।

१ जैसे गरुड़जी और हाथी से लेकर छोटी सी चींटी तक, सभी प्राणी गंगाजी को पाकर अपनी अपनी प्यास के अनुरूप जल पीकर अपनी पिपासा तृप्त करते हैं, वैसे ही बड़े छोटे कोई कवि हों, मनहरण प्राण प्यारे जू के रसमय चरित्र को पाकर अपने अपने विवेक के अनुसार रसपान करते हैं और अपनी रस पिपासा तृप्त करते हैं।

२ चाहे कर्मनाशा (१) के समान अपावन नदी हो या यमुनादि (२) के समान पवित्र नदियाँ हों, गंगा में मिलने पर संगम से आयेंगे। (३) चल कर गंगा के समान ही फल दायिनी बन जाती हैं। वैसे ही ही मनहरण जानकी रमण जू के रस चरित्र से मिलने पर क्या भाषा, क्या देव वाणी संस्कृत सभी पाप अज्ञान को हरने वाली बन जाती हैं।

❋ अथ अवकाश ६ ❋

❋ रोला छन्द ❋

कछुक देर रस प्रेम मगन[1] मन मौन ओर[2] दोउ।
धरेउ अथर्वण धीर प्रश्न राखेउ[3] पूछेउ सोउ ॥
पंचम[4] धाम प्रभु[5] रूप कहेउ सन्देह[6] कृपा[7] धनि।
महा रसिक मणि[8] ईश महाकवि भक्ति[9] शिरोमणि ॥१॥
प्रभु[10] अनन्द जुत कहहिं सुनहु श्रुति चारि चतुर वर।
ईश हमार तुम्हार एक राजत पाँचहु घर ॥
प्रति स्थान बिहार भेद जेहि[11] लखे खेद[12] नहिं।
†कतहु दिव्य[13] गुनतेज[14] दृष्टि[15] कहुँ रूप[16] भेद[17] नहिं ॥
परम गुह्य[18] यह शास्त्र गोप्य मैं कही कहव[19] तहँ।
जहँ सत्संग विवेक हृदय[20] चष खुले दिव्य जहँ ॥
शान्ति सुमति संतोष रसिक विज्ञान शास्त्र[21] वित।
दया प्रेम हरि भक्त भक्ति त्रय गुन्य[22] जक्त जित ॥ ३ ॥

---

१ प्रेम रस में मन डूबा रहा । २ श्रोता वक्ता दोनों पक्ष। ३ जिनके उत्तर अभी तक नहीं मिले थे। ४ श्री साकेत। ५ परात्पर रूप श्री जानकी रमण जू का। ६ संदेह पाच स्थलों के ब्रह्म तत्व में। ७ कृपानिधान। ८ रसिकाचार्यों में बड़े। ९ सबसे बड़े भक्त। १० श्री-शेष जी। ११ इस रहस्य को समझ लेने पर । १२ फिर संशय नहीं रह जायगा। १३ श्री राघवेन्द्र जू के दिव्य गुण से महा विष्णु। १४ तेज से महाशंभु। १५ समत्व दृष्टि से वासुदेव। १६ शृंगार रूप से श्री-कृष्ण। १७ तत्वतः भेद नहीं केवल नाम, रूप, लीला, धाम में। १८ छिपाने योग्य। १९ आप भी वहीं यह भेद खोलियेगा जहाँ……। २० हृदय की दिव्य दृष्टि । २१ शास्त्र के ज्ञाता । २२ त्रिगुणात्मक संसार को जीते हुए हों। † परिशिष्ट देखिये।

*** काव्य छन्द ***

रहेउ[1] प्रश्न सो सुनहु चित्त[2] धर सूक्ष्मक[3] भाषौं।
तुम प्रवीन[4] सर्वज्ञ[5] तदपि जस[6] कछु नहि राखौं[7] ॥
राम नाम सम मंत्र आन नहि कोइ[8] जानहिं जेहि।
जेहि जाने जग[9] नाश आस[10] विज्ञान आदि नहिं ॥ १ ॥
नाम[11] रूप शिव लखी राम सिय हृदय बसे हैं।
ज्ञान कसौटी[12] मनहि नाम बल भले कसे हैं ॥
नामहि बल हनिमान[13] नाम हनुमान सर्व[14] जय।
जासु कमल[15] हृदि रसिक राम सिय लुब्ध[16] भ्रमर भय ॥
गाधि[17] पुत्र बल नाम भये परमीश[18] जासु भृत[19]।
चिदानन्द[20] अरु भक्ति[21] जनक बल नाम व्याह[22] कृत ॥
दंपति[23] नाम स्वरूप भये सुत सहित विभव[24] चलि।
परम धाम सुख सहित नाम के मध्य रहे हलि। ३ ॥

---

१ पर धाम, पर रूप, परात्पर रस—इन तीन प्रश्नों के उत्तर हो चुके, अब यहाँ पर मंत्र वाले प्रश्न का उत्तर है। २ चित्त में धारण करो। ३ संक्षेप में कहता हूं। ४ निपुण। ५ सब जानने वाले। ६ जैसा कुछ मेरे पास है। ७ छिपाऊँगा। ८ बिरले। ९ जन्म मरण से छुट्टी। १० श्री नाम ही सब देते हैं। ११ नाम सरकार के ऐश्वर्य वाले स्वरूप को। १२ कसौटी पर कसने से खरे खोटे की पहचान होती है। १३ अभिमान के समूल नाशकर्त्ता। १४ सबों को जीतने वाले। १५ हृदय रूपी कमल में। १६ रस के लोभी। १७ विश्वामित्र जी। १८ परात्पर ब्रह्म श्री राघवेन्द्र जू। १९ दास। २० श्री रघुनन्दन जू। २१ श्री जनकनन्दिनी जू। २२ दोनों का विबाहोत्सव रचाया। २३ श्री मनु शतरूपा जी को। २४ भरतादि एवं दिव्य धाम के ऐश्वर्य संयुक्त।

जानेऊ नाम निषाद[१] चरण जल दीन्ह सीय जुत।
अत्रि[२] नारि वल नाम ब्रह्म हर विष्णु कीन्ह सुत[३] ॥
शिवरी नाम सनेह सोह मुनि मध्य भक्ति[४] जिमि।
वालि नाम पहिचान परम जोगीश लहेऊ तिमि[५] ॥४॥
सेतु करत मति अमित + सोच हनुमान दिखाई।
‡ अर्ध नाम लिखि गिरिन्ह आप आपहि जुरि जाई॥
अर्ध नाम वल असुर[६] भक्ति को अंश[७] गयो लै।
ताके वल प्रभु समर केलि[८] सायुज्य[९] मुक्ति भय ॥५॥
‡ नाम विभीषण मणि पुराहि विष संग परस नहि।
जानेउ भरत प्रवाह नेह उमगेउ[१०] न सकेउ रहि॥

---

‡ परिशिष्ट देखिये।

* मति दिखाई = नाम महिमा विषयक सिद्धांत को चरितार्थ किया।

‡ लंका रूपी सर्प के शरीर में श्री विभीषण जी मणि की भाँति रह कर, वहाँ की आसुरी बृत्ति रूपी बिष से अलिप्त रह गये।

+ श्री नल को अपार चिंता इस बात की हुई कि पर्वत तैरते तो हैं, परएक साथ जुट कर सेतु-रूप नहीं बनते।

१ गंगा पार उतारने वाला केवट। २ अनुसूया। ३ त्रिदेवों को पुत्र बनाया। ४ साक्षात् भक्ति की मूर्ति। ५ शवरी समान ही। 'योगि वृन्द दुर्लभ गति जोई। तो कहँ आजु सुलभ भई सोई॥' ६ रावण के नामाक्षरों में श्री राम नाम का अर्द्ध भाग 'रा' था। ७ श्री मैथिली जू का प्रतिबिंब रूप। ८ प्रभु के साथ युद्ध क्रीड़ा की। ९ 'तासु तेज समान प्रभु आनन।' १० प्रेम की ऐसी प्रबल धारा उमड़ चली कि रुकी नहीं।

तासु प्रेम करि दाम राम सीय पोहि[1] नाम मनि।
शीश दान जो देहि[2] ताहि पहिरावहि गनि[3] गनि ॥६
नारद जानेउ नाम जहाँ चाहहिं तहँ जाहीं।
पितु आज्ञा[4] तजि सनक नाम बल निडर[5] सदाहीं॥
अर्ध[6] नाम विधि मय जेहि बल बहु सृष्टि सँवारी।
मध्य[7] कला मय विष्णु सकल रक्षक अरि मारी ॥ ७॥
पुरन[8] शंभु मय जक्त नाश जेहि देखत होई।
अग्नि[9] हेतु पुनि कर्म शुभा शुभ भस्म करोई॥
उभय[10] बीच रवि हेतु मोह निशि नाश ज्ञान कर।
अन्त[11] इन्दु पय तोष शान्त मानादि ताप हर ॥ ८॥

---

१ ऐसे ही प्रेम की डोरी बना कर श्री सीताराम नाम रूपी मणि माला गूँथे। २ शिरसा प्रणाम पूर्वक सर्वस्व समर्पण करने वालों को। ३ चुन चुन कर। ४ इनके पिता श्री ब्रह्माजी ने इन्हें पुत्र उत्पन्न करके सृष्टि फैलाने की आज्ञा दी थी। ५ पितु आज्ञा भंग वाले अपराध से। ६ रकार स्थित अकार से अनंत ब्रह्मा। ७ श्री राम नामान्तर्गत मध्याकार से अनंत विष्णु। ८ अंतिम मकार के अकार से अनंत शंकर प्रगट होते हैं। ९ रकार अग्नि के कारण हैं; अतः उनसे ऐसा अग्नि प्रगट होता है, जो जापक के समस्त शुभाशुभ कर्मों को भस्म कर देता है। १० मध्याकार सूर्य के कारण हैं। इस आकर ऐसे अपूर्व सूर्य प्रगट होते, जो जापक के हृदय से मोह-रात्रि को हटा, वहां ज्ञान का प्रकाश भर देते हैं। ११ अन्तिम वर्ण मकार चन्द्रमा का कारण है। इससे जापक के हृदयगत मान अपमान जनित ताप मिट जाते हैं तथा उन्हें तृप्ति और शांति प्राप्त होती है।

(इस प्रसंगका परिशिष्ट भी देखिये)

नाम देवसरि[1] दिव्य हेतु[2] जेहि प्रेम[3] भगीरथ।
† ब्रह्म लोक सुर मध्य त्रिकुटि पाताल जीभ पथ॥
पुनि सुरसरि[4] सरस्वती[5] जमुन[6] मिलि सुरति त्रिवेनी।
जेहि मज्जत गुण[7] त्रिविधि ताप हरि[8] भक्ति सुदेनी॥
नाम पोत[9] एक[10] पवन एक[11] कर धरन भक्ति भरि[12]
जक्त पार चढ़ि चले संत कोइ कोइ सतगुरु[13] करि॥
‡ चित्रकूट चित शान्त तोष कामता शान्ति वन।
नाम राम सिय लखन प्रेम मंदाकिनि गृह पन॥१०॥
* जज्ञ शब्द अध्यात्म अर्ध अरु एक कला करि।
अर्ध मात्र करि हंस शब्द कल एक ब्रह्म परि॥

---

† गंगा की भांति नाम महाराज भी त्रिपथगामी हैं ? इनकी आकाश-धारा वत एक स्थिति मस्तक में, दूसरी मध्य धारा दोनों भौंहों के बीच त्रिकुटी पर तथा तीसरी पाताल-धारा जिह्वा पर है।

‡ नाम जापक का शांत चित्त ही श्री चित्रकूट हैं (चित्रकूट चित चारु) वैराग्यवान जापक-हृदय का संतोष ही श्री कामनाथ गिरिराज हैं। हृदय की शांति विहारवन है। नामाक्षरों में तीनों सरकार हैं। जापक का अविरल प्रेम मंदाकिनी धारा है। नाम जप का अनन्य व्रत ही प्राणधन जू के लिये पर्णशाला है।

* परिशिष्ट देखिये।

१ गंगा। २ प्रगट करने वाला कारण। ३ जैसे महाराज भगीरथ ने गंगा को प्रगट किया, वैसे ही प्रेम नाम सरकार को प्रगट करता है। ४ नाम-गंगा। ५ वैखरी वाणी। ६ श्याम छविका ध्यान। ७ रज-तम-सत गुणों से उत्पन्न पाप। ८ हरण कर के। ९ 'नाम निज नाव रे' १० 'सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो।' ११ 'कर्णधार सद्गुरु दृढ़ नावा।' १२ भक्ति रस भरित हृदयवान। १३ सदगुरु शरणापन्न।

शब्द भेद पुनि[१] कहव सुनहु श्रुति नाम प्रतापू।
रामचरण जेहि लखे सकल सुख आपहि आपू ॥११॥
*जुगल वरण मृग पूर इन्दु जिय प्रेम सुधा भरि।
संत समाज पयोधि ज्ञान सर्पेश रमा हरि ॥
†ईश धर्म तरु मूल युग्म दल फल रस साँचे।
भव समुद्र दोउ कूल[२] लहेउ[३] सोइ डूबत बाँचे ॥१२॥
स्वजन जीव[४] खग पक्ष मोह निशि[५] सूर चन्द्र दोउ।
करनफूल तिय[६] भक्ति छत्र श्रुति मुकुट[८] नयन[७] सोउ॥
‡परमातम आतमा ब्रह्म बिच सुन्दर साषी।
इत उत ते समझाय मिलावत चतुर दुभाषी ॥ १३ ॥

---

* 'रकार मकार दोनों नामाक्षर मृगा संयुक्त पूर्ण चन्द्र के समान हैं। जिनके अभ्यंतर प्रेमामृत परिपूर्ण है। ये नाम–चन्द्र संत समाज रूपी क्षीर समुद्र से प्रगट होते हैं, जहाँ ज्ञान चर्चा श्री शेष जी हैं तथा रकार श्री मन्नारायण, मकार श्री लक्ष्मी जी हैं।

† नाम रूपी वृक्ष का अंकुर भागवद्धर्म, दोनों नामाक्षर अंकुर से प्रगट दो दल हैं। तथा उसके सच्चे सरस फल भी नाम ही हैं। साधन साध्य नाम ही हैं। मिलान के श्लोक परिशिष्ट में देखिये।

‡ अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाषी॥

१ आकाश १२ में। २ दोनों नामाक्षर दोनों किनारे हैं। ३ भवसिन्धु तट के समान नाम को पा लेने पर। ४ अपनाये हुए जीव रूपी पक्षी को उड़कर प्रियतम के निकट पहुँचने के दोनों नामाक्षर दोनों पंख हैं। ५ मोह रूपी रात्रि को नाश करने के लिये रकार सूर्य, मकार चन्द्रमा हैं। ६ भक्ति रूपी नायिका के सुहाग चिह्न दोनों कर्णफूल हैं दोनो नामाक्षर। ७ वेद के दोनों नेत्र हैं। ८ छत्र मुकुट के समान जिस अक्षर के शिर पर चढ़ें उसे राजपद मिलता है।

नाम जानि शुक्र तजेउ पिता[१] बन केलि[२] भरी है।
दत्तात्रय जड़भरत जानि जग खाक[३] करी है॥
प्रभु[४] उद्धव कहँ दीन्ह नाम बल सब रस[५] पायेउ।
‡ सांख्य शास्त्रयुत कपिल मातु कहँ नाम पियायेउ॥
† मांगि उपायन प्रेम सुदामा मग्न नाम बल।
‡ निष्किंचन अति विदुर नाम मनि धनमन अविचल॥
श्रीब्रजतिय सब[६] त्यागि नाम[७] रस विरह[८] भजी हरि।
रामचरण तब नाम भार जग[९] भार[१०] डारि करि॥१५॥
* जानेऊ श्रीप्रहलाद नाम जेहि रोम रोम धुनि।
शिला[११] फोरि प्रभु प्रगट भक्त हित नाम शब्द सुनि॥

---

‡ भगवान कपिल जी ने अपनी माता देवहूतीजी को सांख्य शास्त्र का जो उपदेश किया है, वह तो व्याज मात्र था। आपने पिलाया तो उन्हें नाम रस।

† विप्र सुदामा नाम के बलसे ऐसे प्रेम में डूबे रहते थे कि स्वयं भगवान द्वारकाधीश ने उनसे प्रेमोपहार तंदुल मांग मांग कर पाया।

‡ सर्व संग्रह त्यागी महात्मा विदुर जी का सर्वस्व था नाम चिंतामणि, जिससे प्रत्येक स्थिति में उनका मन अडोल बना रहता था।

* नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भगत सिरोमनि भे प्रहलादू॥

१ व्यास समान ईश्वरावतारी पिता को भी। २ वन के वृक्ष वृक्ष में 'शुकोऽहम्' ध्वनि द्वारा कौतुक। ३ धूल समान तुच्छ जान कर त्याग दिया। ४ श्री कृष्ण। ५ प्रेमाभक्ति के सब स्वाद। ६ सब साधनों को छोड़कर। ७ नामामृत रसास्वादन के प्रभाव से। ८ विरहावस्था में भी प्राण धारण करती हुई। ९ संसार के सारे बोझ को। १० भड़-भुजे के चूल्हे में झोंक कर। ११ पत्थर के खंभा फोड़ कर।

ध्रुव जानेउ प्रभु नाम राज[१] करि दिव्यासन[२] लहि।
बाल्मीकि विधि उभय[३] मनहु भये शुद्ध[४] नाम गहि॥
इनहि आदि दै अपर भये प्रभु के[५] अधिकारी।
जिन्ह काढ़ेउ[६] मनि नाम वेद[७] गिरि सुमति[८] कुदारी॥
सोवत जागत सुप[९] मध्याह्न[१०] शुद्धौ अशुद्ध[११] थल।
राम नाम नित रटत ताहि त्रय काल होत भल ॥१७॥
† जोग यज्ञ जप ग्यान दान तप कोटि जन्म करु।
बिनु सतगुरु नहिं मिले नाम कोटिन तन पचि मरु॥
नाम रूप सुनि मगन वेद मृग मद[१२] जनु जाने।
‡ यथा अजामिल सिंह सिंह मिलि निज पहिचाने ॥१८

---

† कोटि कोटि जन्म जन्मान्तर पर्यंत नाना प्रकार के साधन करते करते भले पच पच कर मरते रहें, किंतु अपने पुरुषार्थ बल से श्री नाम सरकार को प्राप्त करना दुर्लभ है। वे तो सद्गुरु कृपा द्वारा प्राप्त होते हैं। ‡ सिंह का बच्चा बकरियों के बीच जब तक रहा, तब तक अपने को बकरी समझता था। सिंह से मिलने पर अपना स्वरूप ज्ञात हुआ।

१ भूमंडल का राज्य सुख भोग क.९। २ अन्त में अक्षय ध्रुवलोक प्राप्त किया ३ दूसरे ब्रह्मा। 'बाल्मीकि भये ब्रह्म समाना।' ४ 'भयउ शुद्ध करि उलटा जापू।' ५ भगवत्प्राप्ति के। ६ नाम रूपी चिंतामणि मानो खोद कर निकाला। ७ 'पावन पर्वत वेद पुराना॥' ८ 'मर्मी सज्जन सुमति कोदारी।' ९ नाम जापक को सोते जागते हर समय नाम रटने से सुख ही सुख है। १० मध्याह्न काल और सत्कर्म के लिये भले वर्जित हो, पर नाम जप के लिये नहीं। ११ प्रत्येक जगह जप सकते हैं। १२ मानो मृगा को पता लग गया कि कस्तूरी अपने ही अन्दर थी।

*** दोहा ***

वानी सुकवि विचित्र बुध, भणित आदि प्रभु नाम।
लोने फल इन्दारुणी, राम चरण केहि काम ॥ १ ॥
ज्ञान अजामिल जवन मम, कुमतिय क्रोध वराह।
सुत हराम कहि गति लही, मैं तो पतित अचाह ॥ २ ॥

इति श्री रस मालिकायां बोध शास्त्रे महामंत्रे पूर्णाति महा शब्दे संज्ञावर्णनो नाम नवमोऽवकाशः ॥६॥

१—अलौकिक विद्वान सुकवि के द्वारा रस अलंकार से युक्त मनोहारिणी कविता क्यों न सुरचित हो, यदि उसमें प्रिया-प्रियतम जू के कविता-प्राण समान नाम नहीं है, तो वह व्यर्थ है। इन्दारुण का फल देखने में बड़ा (लोना) सुन्दर लगता है, पर कड़ुआ होने से खाने के काम में नहीं आता, वृथा ही तो है।

भनित विचित्र सुकवि कृत जोऊ। राम नाम बिनु सोह न सोऊ ॥
विधु वदनी सब भाँति सँवारी। सोह न वसन बिना वर नारी ॥
—श्री मानस जी।

२—अजा अर्थात् माया से मिलकर मेरा ज्ञान दूषित हो रहा है। अतः मुझे अजामिल ही समझो। कुबुद्धि (कुमतिय) रूपी दुष्टा स्त्री में उसी की तरह आसक्त भी हो रहा हूं। परंतु अजामिल ने तो बेटे के बहाने ही सही भगवन्नाम लिया तो। मैं तो ऐसा पतित हूँ कि नाम रुचि चाह) से सर्वथा बंचित हूँ।

माया से ज्ञान आवृत होने के कारण मैं यवन के तुल्य नास्तिक हो रहा हूँ। मुझे भी क्रोध रूपी सूअर ने सर्वनाशक आघात पहुँचाया है। परन्तु वह यमन तो हराम के व्याज से नामाभास उच्चारण द्वारा परमपद पाया, मैंतो व्याजसे भी नामोच्चारण करने से अचाह बनाहूँ। यहाँ पूज्य ग्रन्थाकार का कार्पण्य जानिये।

❋ अथ अवकाश १० ❋

❋ काव्य छन्द ❋

‡ ब्रह्म रूप श्रुति सुनहु चारि संज्ञा बुझाय मन।
लखहिं[१] नाम वल सुजन जिनहिं सत्संग प्राण धन॥
त्तर[२] अत्तर[३] नेत्तर[४] तेहि ते एक पुरुष[५] अन्य है।
अविनाशी गति[६] चार कछुक तहँ पृथक[७] भेद है॥१॥
प्रथम सुनहु त्तर ब्रह्म रूप तहँ तत्व[८] ब्रह्म कहि।
† प्रणव ब्रह्म गुण तीन ब्रह्म आकाश पवन लहि[९]॥
अग्नि ब्रह्म जल ब्रह्म ब्रह्म त्तिति चित्त ब्रह्म पुनि।
मनो ब्रह्म बुधि ब्रह्म ब्रह्म हंकार लेव[१०] गुनि॥२॥
शब्द ब्रह्म पुनि परस रूप रस गंधि ब्रह्म गनि।
सृष्टि मरण सुख दुःख वेद कर्मादि ब्रह्म भनि॥
❋ कहत मीमांसा बात ब्रह्म ब्रह्माण्ड रूप त्तर।
अविनाशी सो यदपि तदपि सब नाश लखै पर॥३॥

---

‡ हे वेदो, मनको एकाग्र करके सुनो। ब्रह्म स्वरूपके चार मुख्य नामहैं।

† मूलाविद्या, महत्तत्व, रज, तम, सत, आकाश, पवन, अग्नि जल, पृथ्वी, चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध—इन सबों की ब्रह्म तत्व में ही गणना की गई है। जन्म, मरण, सुख-दुःख, वैदिक कर्म—सबों को ब्रह्म ही बताया (भनि) गया है।

१ इस रहस्य को वे समझेंगे। २ माया ब्रह्म। ३ जीव ब्रह्म। ४ निरत्तर निर्गुण ब्रह्म। ५ सबसे परे पुरुषोत्तम राघवेन्द्रजी। ६ अवस्था। ७ अलग अलग। ८ सांख्य के मत से यह २४ तत्वों का ब्रह्म ही है। ६ तक। १० समझ लेना। ❋ परिशिष्ट देखिये।

 15309

रामचरण फुर[1] कहत मोहि सम पतित[2] न दूजा।
सोयराम पद छोड़ि करौं हित[3] लखि नर[4] पूजा ॥
आतम ब्रह्म[5] निरूप[6] सुनहु कुछ कहि वेदान्त घर[7] ।
निर्मल[8] निर्गुन[9] अचल[10] अकल[11] अद्वैत[12] तेज[13] वर
तेहि ते अंड[14] प्रकाशि[15] पूरि ब्रह्माण्ड रहेउ इमि।
† पवन गगन निर्लेप अमित घट एक सूर्य जिमि ॥
‡ त्रिगुन कर्म घट नीर राग रवि लखि न परिहि गहि।
घट फूटे जल नाम रूप रवि मिलेउ प्रभा रहि ॥ ५ ॥

---

१ सत्य सत्य। २ पूज्यपाद ग्रन्थकार अपने व्याज से हम सबों को धिक्कारते हैं। ३ भ्रमवश माया को अपना भला चाहने वाली समझ कर। ४ माया। ५ इसे अक्षर ब्रह्म या जीवात्मा भी कहते हैं। ६ स्वरूप–निर्णय। ७ दार्शनिक सिद्धांत के अनुसार। ८ जीव स्वरूपत: मायिक विकारों से रहित है, इसमें जो मल भासता है, वह माया के संसर्ग से आगन्तुक है। ९ रज, तम और सत- इन तीनों मायिक गुणों से रहित। १० अविनाशी। ११ खंड रहित, सर्वांग पूर्ण। १२ घट-घट व्यापक एक ही तत्व। इनके सिद्धान्त से जीव एक ही है। १३ महान प्रकाशवान। १४ चराचर के स्थूल दृश्य रूप। १५ चैतन्यांश।

† वायु में जो समय समय पर शीत, उष्ण, सुगंध, दुर्गन्ध आदि गुण भासित होते हैं, वे वायु के स्वरूपगत नहीं, प्रत्युत संसर्ग जनित आगन्तुक धर्म हैं। स्वरूपगत धर्म का कभी अभाव नहीं होता। वैसे ही आकाश के अन्धकार, धूएँ और धूल आदि आगन्तुक धर्म हैं। इसी भांति जीव का आगन्तुक धर्म समझिये।

‡ सूर्य तो एक ही हैं, अनेक जल पूर्ण घड़ों में उनके अनेक प्रतिविंब दीखते हैं। जीव के नाना त्रिगुणात्मक स्थूल शरीर को घड़े समझिये, जिनमें देह गेह सम्बन्धी आसक्ति रूपी जल भरा है।
(अगले पृष्ठ में)

† लघु बड़ घट शुभ अशुभ अमित घट सोइ रवि दरसै।
तिमि आतम चर अचर भूमि नभ पूरण परसै॥
नहिं आवै नहिं जाय मरे मारे नहिं काहू।
‡ त्रिगुन कर्म करि ढपेऊ जथा पूरण शशि राहू ॥ ६॥
* आतम बाल न युवा जरा शीतोष्ण न दोऊ।
पाप पुण्य सुख दुःख नरक अरु स्वर्ग न सोऊ॥
किन्नर सुर गंधर्व नाग असुरों न यक्ष धर।
वर्णाश्रम संत न असंत रवि शशि न चराचर ॥ ७॥

सूर्य प्रतिबिंब की भांति इन घटों में एक ही अद्वैत जीव-ब्रह्म के नाना प्रतिबिंब भासित होते हैं। देखने में आते हैं, पकड़ के नहीं। जैसे घड़े के फूटने पर जल बिखर गया, सूर्य प्रतिबिंब सूर्य के बिंब में जाकर मिल गया। उस प्रतिबिंब का न नाम रहा, न रूप। उसी प्रकार स्थूल शरीर नष्ट होने पर, जीव-प्रतिबिंब अपने अद्वैत बिंब में मिल जाते हैं।

† घड़े चाहे छोटे हों या बड़े, भले हों या बुरे; किंतु सूर्य प्रतिबिम्ब तो समान रूप से ही उनमें झलकते हैं। वैसे ही थलचर, नभचर आदि चराचर स्थूल रूपों में एक ही जीव ब्रह्म के प्रतिबिम्ब परिपूर्ण रूप से व्याप्त हैं।

‡ त्रिगुणात्मक शुभाशुभ कर्मों से जीव स्वरूप ऐसे ढक गया है, जैसे पूर्णचन्द्र राहु के ग्रसने पर।

* इस छन्द में जो विभिन्न अवस्थाएँ, धर्म, देशकाल, नाम रूप, वर्ण विभाग आदि गिनाये गये हैं, जीव तत्व उन सबों से परे शुद्ध सच्चिदानन्दमय है।

+ उर भीतर रमि रहेउ आत्मा ब्रह्म भांति इमि।
एक बीज तरु अमित बीज प्रति बीज वृक्ष जिमि॥
‡ बहुरि यथा तिल तेल क्षीर घृत देखि न आवै।
प्रगटत पेरत मथत उभय बिन यतन न पावै॥ ८॥
+ नट कृत बेष अनेक कला सोइ सोइ करि भ्राजै।
बेष तजे निज रूप यथा उग्रह रवि राजै॥
* जिमि सम्पुट मनि नाग नाग मनि मनि गिरि जैसे।
यह विधि सब घट अलख लखै सतगुरु बिन कैसे॥९॥

---

† अब दूसरे दृष्टांत के द्वारा एक ही जीवात्मा का नाना रूप बन जाना दिखाते हैं। प्रारम्भ में बीज एक ही था। भूमि में डालने से उससे क्रमशः अनेक वृक्ष हो गये। फिर उनसे अनंत बीज, पुनः अनंत वृक्ष। उसी प्रकार एक ही जीव तत्व प्रकृति मंडल में आकर अनन्त रूपों से रमण कर रहा है।

‡ तिल के अन्दर तेल, दूध के अन्दर घी छिपे रहते हैं। क्रमशः कोल्हू में पेरने पर तथा मथने पर प्रगट होते हैं। उसी प्रकार आत्मस्वरूप स्थूल शरीर में जो अदृश्य सा हो रहा है, वह भजन रूपी यत्न के द्वारा अनुभव गोचर होगा।

+ नट नाना स्वांग सज कर उनके अनुरूप कौतुक दिखाता है। उस समय उसे पहचानना कठिन है। स्वांग हटाने पर अपने रूप में स्थित होता है, तब ग्रहण-उग्रास के उपरान्त स्पष्ट सूर्य्य की भांति उसे पहचान पाते। उसी प्रकार स्थूल शरीरसे परे जीव स्वरूपहै।

* सर्पमणि, गजमुक्ता, या पर्वत मणि जब तक डब्बे में बन्द रहती है, तब तक उसे पहचान नहीं सकते। खोलने पर जौहरी द्वारा उसकी पहचान होती है। वैसे ही स्थूल शरीर में प्रच्छन्न आत्म स्वरूप को सद्गुरु चिन्हाते हैं।

† पद्म पत्र सम जदपि तदपि बँधि रहेउ आस करि।
जिमि मर्कट शुक बंधेउ भूलिगे निज स्वरूप परि॥
‡ दश पाया को पलँग पंच तोषक उसीर षट।
सखि पचीस सुख टहल पलंग चौकीश चतुर भट॥१०
सोइ रहेउ तहँ जीव मोह निशि राग नींद भरि।
* बुद्धि शुद्ध चित्त उभय जगावहिं तेहि स्वधर्म करि॥
जागु जागु बलि जागु जागु मम ईश बुद्धि कहि।
रोइ रोइ मन मनै करत अरे मत जगाउ यहि॥११॥

---

† जल में रहते हुए भी कमल का पत्ता उससे अलिप्त रहता है। इसी प्रकार प्रकृति मंडल में यह जीव प्राकृतिक गुणों से अलिप्त है। फिर भी विषय सुख ही आशा करके बंधा है। कैसे? जैसे बन्दर और सुग्गा अपनी इच्छा से बहेलिये के जाल में पड़ कर अपने स्वतंत्र स्वरूप को भूल जाते हैं।

‡ जीव कैसे अचेत सोया है? रूपक द्वारा बताते हैं। शरीर तो पलंग है। दश इन्द्रियां इस पलँग के पावे हैं। पंच प्राण तोशक हैं। षट विकार रूपी तकिये लगे हैं। पच्चीसों तत्त्व सखी स्वरूप से सेवा में जुटे हैं। अंतकरण चतुष्टय पहरेदार हैं। मोह रूपी रात्रि में विषयानुराग रूपी निद्रा में मगन होकर जीव वहां सोया है।

* शुद्ध बुद्धि और शुद्ध चित्त दोनों जीव के मंत्री हैं? अपने सेवक धर्म के कर्त्तव्यानुरोध से दोनों जीव को जगाते हैं। "हे मेरे स्वामिन्! आपकी बलैया लेवें। जगिये! जगिये!!" इस पर मन रो कर बरजता है कि अरे रे!! जगाओ मत। मत जगाओ इसे।

खुलहि ज्ञान बैराग्य नयन तब कुशल न जोई।
द्वै तुम हम सब नाश शंभु मनसिज जिमि खोई॥
जागहिं परमानन्द तुरी रथ रूढ़ रूप लहि।
नाश लखत ब्रह्माण्ड जथा रबि उदय रैन दहि॥१२॥
रहि जाइहि लखि एक द्वैत हति जहां हंस दिन।
पुनि कंचन लखि एक आभरन नाम मात्र भिन॥
पेंषन बहु एक दारु तंतु पट आयुध लोहै।
जिमि कुम्हार मृतकापि आदि अन्तहु एक जो है॥१३

१२—मन शुद्ध बुद्धि और शुद्ध चित्त से कहता है—'जागने पर इसके ज्ञान वैराग्य रूपी नेत्र खुल जायेंगे। तब हम अपनी कुशल नहीं देखते। तुम दोनों (बुद्धि, चित्त) के साथ मैं (मन) भी नष्ट हो जाऊँगा, जैसे श्री शिव जी के जगने पर काम जलकर नष्ट हो गया। जग जाने पर परमानन्दमय तुरीयावस्था रूपी रथ पर बैठकर अपने महली दिव्य सखी स्वरूप में स्थित हो जायगा, उस समय इसके लिये संसार मिट जायगा, जैसे सूर्योदय के बाद रात्रि नहीं रहती।

१३—मन बुद्धि से कहता है कि जहाँ इस जीवात्मा (हंस) के लिये ज्ञान रूपी दिन हुआ कि यह जगत के नानात्व को भूलकर अद्वैत अक्षर (जीव) ब्रह्म के शुद्ध स्वरूप को जान जायगा। जैसे :—स्वर्ण भूषणों के अलग २ नाम हैं, पर हैं सभी एक ही द्रव्य सोना। एक ही लकड़ी जाति बहुत से नाम वाले खिलौने बन जाते हैं, सूत एक ही जाति से अनेक रंग के वस्त्र, लोहे से अनेक नाम वाले हथियार बनते हैं। जैसे कुम्हार नाना प्रकार के वर्तन बनाता है। उस द्रव्य को पहले भी मिट्टी मानता, बर्तन फूटने पर पुनः मिट्टी की मिट्टी। इसी प्रकार जीव तत्त्व एक है। नाम रूप भले भिन्न भिन्न दीखें।

इक्षु एक बहु स्वाद अन्न व्यञ्जन बहु जैसे।
बिनु जानै द्वै दीन चारि वर्णाश्रम तैसे ॥
जागि लखहि गति आदि प्रगटि जिमि अग्नि वेनकरि।
गष्टि घृष्टि करि उठत भस्म दोउ होत सकुल भरि ॥
सकल खाक करि तासु तेज मिलि महा तेज महँ।
जथा सिंधु जल भिन्न होत पर मिलत सिंधु महँ ॥
यथा प्रभा रवि पात्र भग्न रवि महँ मिलि जाई।
यथा राम को वान कार्य करि तून समाई ॥ १५ ॥

१४—एक ही जीव तत्त्व अनेक रूपों में कैसे भासता है ? इसी के लिये पुनः दृष्टांत देते हैं । ऊख से गुड़, शक्कर, चीनी, मिश्री आदि अनेक स्वाद वाले पदार्थ प्रस्तुत हुए । एक ही अन्न से अनेक नाम वाले व्यंजन बने । इसी प्रकार एकही जीव तत्त्व दो चार दिनों के लिये चार वर्ण, चार आश्रम आदि नामधारी बन गया। मन कहता है, हे बुद्धे ! यह जीव जगने पर अपनी आदि अवस्था को जान जायगा, तो उसका ज्ञान आग की भाँति प्रगट होकर समस्त प्रकृति तत्व को नष्ट कर देगा अर्थात् असत्य भासेंगे । जैसे बाँस में व्याप्त अग्नि संघर्षण से प्रगट होकर समस्त वंश को जला देता है ।

१५—ज्ञानोदय होने के बाद घट व्यापी जीव प्रतिविंव अपने मूल विंव में मिलकर मुक्तावस्था को कैसे प्राप्त होता है ? जैसे समुद्रसे जल बादल बनकर बरसते हुए पुनः समुद्र में मिल जाता है । जल पूर्ण घड़े का सूर्य प्रतिविंव घड़ा फूटने पर पुनः सूर्य विंव में मिल जाता है और श्री राघवेन्द्र लाडिले जू के वाण निर्दिष्ट कार्य करके पुनः तरकश में प्रवेश कर जाते हैं ।

ज्यों मुख मुकुर विलोकि कोटि करु हाथ न आवै।
मुकुर उलटि मुख बिंब यथा मुख माहि समावै॥
जैसे महि ते गंध नीर रस रूप अग्नि महँ।
परस पवन नभ शब्द जहाँ ते उठंत मिलत तहँ ॥१६॥
ज्यों भृङ्गी मिलि कीट संत मिलि संत होइ इमि।
कपट कलश जब भंग तासु नभ गगन मिलत जिमि॥
सिंह बाल बस भेंड़ रूप लखि सिंह मिलेउ जिमि।
जागि देखि अद्वैत रूप जिय मिलत ईश तिमि ॥१७॥

१६—शरीरस्थ जीव प्रतिबिंब मूल अक्षर ब्रह्म रूपी बिंब में मिल कर कैसे मुक्त हो गया ? इसी के स्पष्टीकरण में और दृष्टांत देते हैं। दर्पण में अपने मुख का प्रतिबिंब दीखता तो है, किंतु पकड़ में नहीं आता। दर्पण उलटने पर मुख प्रतिबिंब मुख बिंब में मिल जाता है। पृथ्वी से गंध प्रगट होकर पुनः पृथ्वी में, जल से रस प्रगट होकर पुनः जल में, अग्नि से रूप प्रगट होकर पुनः अग्नि में, पवन से स्पर्श प्रगट होकर पुनः पवन में, आकाश से शब्द प्रगट होकर पुनः आकाश में, मिल जाते हैं।

१७—जैसे कीड़ा भृंगी के संग में भृंगी हो जाता है। तैसे संत संग से साधक संत बन जाता है। घड़े के पेट में बन्द आकाश घड़ा फूटने पर बृहद् आकाश में मिल जाता है। सिंह का बच्चा भेड़ के संग में भेड़ जैसा बरतता है। वह पुनः अपना स्वरूप पहचानने पर सिंह के साथ मिल जाता है। इसी प्रकार जगने पर जीव अपने को अक्षर ब्रह्म से अभिन्न जान कर उसमें मिल कर एकाकार हो जाता है।

मन बुधि के शिर राखि चितहि बड़ लखि समुझाई।
पुनि बुधि से मन कहत चित्त कहँ साखि सुनाई॥
सुनहु चित्त बुधि मते जीव नहिं मिलत ईश कहँ।
दास रूप नहिं मिलत दास होइ रहत ईश पहँ॥ १८॥
यथा बज्र मनि कनी फूटि तेहि मिले न भाई॥
मनि समीप जड़ि जाइ परम शोभा अधिकाई॥
जल ते मोती होइ बहुरि जल होइ न सोई।
यथा दूध ते दही दूध सो बहुरि न होई॥ १९॥

---

१८ – स्वामी-भक्त बुद्धि ने माया से मिले हुए स्वामी द्रोही मनकी बात जब अनसुनी करदी तो मन उसके आगे शिर टेक दिया। तब मन चित्त को सबसे बड़ा जानकर उसे समझाने लगा। अब बुद्धि रूठ कर मन से नहीं बोलती है, तब चित्त को माध्यम बनाकर बुद्धि को सुना सुना कर मन चित्त से कहता है। हे चित्त, सुनो। बुद्धि के सिद्धांत से जो जीव भगवद्भक्त हो गया, वह अपनी भावना के अनुरूप सच्चिदानन्दमय विग्रह से प्रभु के नित्य कैंकर्य में नियुक्त हो जायगा। वह पुनः अक्षर ब्रह्म में एकाकार नहीं हो सकता।

१९—मन उपर्युक्त सिद्धांत को दृष्टांतों के द्वारा स्पष्ट करता है। हीरे के फूटने पर उसकी कणी पुनः हीरे में पूर्ववत नही मिल सकती। हाँ, यदि किसी मणि में जड़ दी जाय, तो वह हीरा कणी उस जटित मणि की शोभा बढ़ाती हुई स्वय भी सुशोभित होगी। वैसे ही भक्त बना जीव प्रभु के समीप शोभा सम्पन्न होता है। स्वाती बूंद सीप में पड़कर मोती बनी, मोती पुनः जल नही बन सकता। दूध जम कर दही बन गया, फिर दूध नहीं हो सकता। जो भक्त बन गया पुनः अक्षर ब्रह्म में मिलकर तदाकार नही हो सकता।

‡ राहस रस में विवस एक सखि रहि गई न्यारी ।
प्रभु छवि सुरति लागि प्राण तजि रहि ढिग प्यारी ॥
जासु नाम कहि विवस तैल[1] पति यवन[2] आदि मिले[3]
विरह सहित रटिनाम दास दस[4] गहि न राम हिले[5] ॥
दास रूप नहिं मिलत रहत ढिग चाह कछू नहिं ।
तीन मुक्ति फल एक[6] एक यहि रहेउ चारि गहि ॥
तदपि त्रिगुण बिन तजे दास पद कबहु होइ सिधि ?
† जो वनिता पति लहै पिता कुल रहै कवन विधि ?
सकल धर्म भये दूरि[7] दासि भइ ब्रज युवती जब ।
जप तप व्रत नेमादि नाश[8] यह दास होइ तब ॥
बिन जागे नहि दास दास यह होइ काहि[9] लखि ? ।
विना[10] लखे कहुँ प्रीति प्रीति बिनु प्रेम सके भखि ॥

---

‡ एक परकीया गोपी अपने लौकिक पति के रोकने पर परवश होकर श्रीकृष्ण-रास में नहीं शामिल हो सकी। उसका ध्यान प्यारे की मन मोहिनी मूर्ति में लगी थी। प्राण त्याग कर अपने शुद्ध स्वरूप से वह प्यारी प्रियतम के निकट पहुँच गई। ऐसे ही ध्यान निष्ट रसिक मरने पर श्रीकनक भवन पहुँचेंगे।

† परिशिष्ट देखिये।

१ अजामिल। २ हराम कहने वाला यवन। ३ प्रभु की प्राप्ति की। ४ दशधा अर्थात् प्रेमाभक्ति प्राप्त कर। ५ ऐसा सामीप्य पाते कि पुनः अलग न हो। ६ सामीप्य में चारों अन्तर्भूत हैं। ७ समस्त धार्मिक बंधनों से मुक्त हो गई। ८ आपही आप सभी साधन छुट जाते। ९ जगने पर अपने स्वामी को पहचानेगा, तब दास बनेगा। १० बिना जान पहचान के।

* बिना प्रेम की भक्ति हेतु घृत बारि मथइ जड़।
बिन सतसंग गँवार यथा[1] जग चतुर होइ बड़॥
जागि लखे प्रभु रूप स्वप्न[2] जग दुख सुख बीते।
‡ प्रीति बढ़ेउ तब प्रेम नेम हति दास सही ते॥ २३॥
भ्रमत जीव जग माँहि वासना बुधि मन चित बस।
दास वासना नाश[3] सर्व भ्रम रजु[4] भुजंग जस॥
† यथा छार नभ, अग्नि, नीर, मनि, मुकुर गये ते।
त्यों निर्मल जिय[5] दास, वासना नाश भये ते॥२४॥
जहां आस नहिं दास दास जहँ आस न है इमि।
श्रीरामचरण रवि[6] रैनि एक स्थान उदय किमि॥
चित बुधि मन संवाद सुनत जिय[7] चौंकि जागि कहि[8]
को उपदेशत मोहि लखेउ[9] निज रूप आन नहिं॥

---

* घी के लिये जल मथना मूर्खता है, ऐसे ही भगवत्प्रेम के बिना भक्ति की लालसा।

‡ प्रीति बढ़ते बढ़ते प्रेम के दर्जे पर पहुँचा, तब नेम स्वतः छुट गया। तब वह सच्चा भक्त बन गया।

† जैसे आकाश से धूल, अग्नि के ऊपर वाला राख, जल का मटमैलापन, मणि के ऊपर वाला मलिन आवरण, दर्पण की काई, हट जाने से इनके निर्मल स्वरूप दीख पड़ते हैं।

१ सत्संग प्राप्त होने पर। २ सपने के समान संसार का कल्पित दुःख सुख। ३ यहां 'नाश' दीप देहरी है। ४ रस्सी पहचान लेने पर साँप विषयक भ्रम मिट जाता है। ५ हृदय। ६ सूर्य और रात। ७ जीवात्मा। ८ जग कर कहने लगा। ९ देखा कि यह तो आत्म स्वरूप ही है।

यथा चोर गृह साह[1] जगेउ जहँ तहँ भगि छिप गये।
कोटिन सूर्य[2] प्रकाश अविद्या निशा[3] नाश भये ॥
काम क्रोध मद मान लोभ ये दुरे[4] सभी चर[5] ।
† कोक कोकनद ईश धर्म विगसित अनंद सर ॥२६॥
तीन[6] अवस्था त्यागि कबहु जब जात तुरी[7] पर।
या पद की यह बात भिन्न[8] करि कहहु कृपा करि ॥
स्वप्न सत्रहों[9] तत्व जाग्रत चौविस[10] भासे।
सकल[11] सुषोपति लीन तुरी महँ तीनों[12] नाशै ॥२७॥
सुनहु अवस्था बहुरि[13] स्वप्न अहि लोक ब्रह्म लहि[14]।
अन्त नाश तेहि लखै जागि[15] जाग्रत तेही कहि ॥
सावधान सुख[16] भयेउ वासना मिटेउ सुषोपति[17]।
तब चीन्हेउ निज रूप जथा[18] अह्लाद तुरी गति ॥२८॥

---

† आनन्दरूपी सरोवर के भक्तरूपी चक्रवाक प्रसन्न हुये तथा भागवद्धर्म रूपी कमल खिल गये।

१ घर वाले मालधनी के जग जाने पर। २ ज्ञानरूपी सूर्य। ३ रात्रि। ४ छिप गये। ५ निशाचर। ६ जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति। ७ चौथी तुरीयावस्था। ८ अलग अलग बिलगा कर। ९ दश इन्द्रियां पंच प्राण, मन और बुद्धि। १० पंच तत्व, पंच तन्मात्राएँ, दश इंद्रियां तथा अंतःकरण चतुष्टय। ११ सरि तत्व। १२ शेष तीन अवस्थाओं का भी भान नहीं रह जाता। १३ दूसरे दृष्टिकोण से अवस्थाओं के भेद। १४ नीचे के नाग लोक से ऊपर के ब्रह्म लोक तक स्वप्नवत मिथ्या हैं। १५ इन चौदहों लोकों के सुख की वासना त्यागना ही जगना है। १६ अतिरिक्त सुख। १७ वासना मिट जाने पर अपने सुख में मग्न होना ही सुषुप्ति है। १८ अपने भावना सिद्ध महली स्वरूप को ज्ञान होने पर फिर उतना ही आह्लाद में मग्न होना ही तुरीयावस्था है।

षोडश दल पर स्वप्न[1] अष्ट दल जाग्रत जो है।
दुइ दल कमल सुषोपति सहस दल तुरी बसो है॥
तब सोई आतम[2] ब्रह्म जागि पहिचानि आपु कहँ।
चहै रहै होइ दास चहै होइ रहे ब्रह्म महँ ॥ २९ ॥
शृणु[3] श्रुति आतम[4] ब्रह्म अचंभव लखत कहतसुनि[5]।
† तुम नहिं जानहु जाहि निरंतर रटहु तासु गुन॥
* सदा तुरी पर जागि रहै श्रुति शेष कहत अस।
‡ मैं चौरासी रैनि मोह किमि कहौं मदीय जस ॥३०॥
चौरासी निशि नटवर[6] वेष करि करि दिखाई सब[7]।
बने[8] मगन प्रभु होहु नतरु[9] कहि देहु न[10] करु अब॥

---

† हे वेदो, आप भी निरन्तर इस अक्षर ब्रह्म (जीव स्वरूप) के अप्राकृतिक गुणों का सदा गान करते रहते हैं, तौभी इन्हें वास्तविक रूप से नहीं समझ सके हैं।

* श्रीशेषजी ने वेदों से ऐसा कहा कि मुमुक्षुओं को चाहिये कि निरन्तर तुरीयावस्था में सावधान रहे।

‡ पूज्यपाद ग्रन्थ कर्ता का कार्पण्य है। मैं चौरासी लाख योनियों म व्यापक मोह रूपी रात्रि में राग रूपी निंद से छक कर बेखबर सोया हूँ। अपने शुद्ध जीव स्वरूपके सुयश को कैसे गान करूँ?

१ स्वप्नावस्था की स्थिति है। २ जीवात्मा। ३ वेदो, सुनो। ४ जीव स्वरूप। ५ कहने में, सुनने में तथा समझने में आश्चर्यजनक। ६ नाना जीवों के रूप बनाकर। ७ उन स्वरूपों की स्वाभाविक क्रियाएँ। ८ अगर नाच बना हो तो प्रसन्न होइये। ९ नहीं तो। १० अब मत चौरासी में जाकर नाचो।

❋ दोहा ❋

नेम[1] प्रेम चातक[2] सफरि, लेत न तजत न दास।
श्री राम चरण धीरज सहित, मोर चकोरइ आस॥१॥
आप सहित चर अचर प्रभु, आप दास सानन्य।
उभय भांति महँ अंध में, मैं जग एक अधन्य॥२॥

इति श्रीरसमालिकायां बोध शास्त्रे अक्षरात्माध्यात्म दास भाव वर्णनं नाम दशमोऽवकाशः॥१०॥

---

१ पपीहे को स्वाती जल के लिये अनन्यता का (१) व्रत है। (२) मछली को जल में ऐसा सच्चा प्रेम है कि बिछुरते ही प्राण त्याग देती है। इनके ये नेम प्रेम जाति-जन्य स्वाभाविक धर्म हैं। इन नेम प्रेम को ये कहीं से सीख कर प्राप्त नहीं करते, न मरते दम तक छोड़ ही सकते। ऐसे ही श्रीप्रिया प्रियतमजू के प्रेमी भक्त बन जाने पर अनन्यता का व्रत एवं सच्चा प्रेम अनायास अविचल रूप से प्राप्त होते हैं। रही प्राप्ति की बात। सो प्रारब्ध शरीर के पूरे भोग काल तक धीरज पूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिये। देखिये मयूर ८ महीनों तक धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करता है, तो चतुर्मासा में इसके प्रियतम सजलघन मिलते, चकोर भी महीना भर प्रतीक्षा करता है तो पूर्णमासी को अपने प्रियतम पूर्णचन्द्र को देखता है।

दूसरे दोहे का अर्थ परिशिष्ट में।

❋ अथ अवकाश ११ ❋

❋ काव्य छन्द ❋

सुनु श्रुति निच्छर[1] ब्रह्म आत्मा[2] ब्रह्म अंश जेहि।
है प्रभु[3] अच्छर ब्रह्म आत्मा कहँ पुनि कर[4] गहि॥
आतम निर्मल जानि[5] अचल[6] अज[7] आदि रूपनहि[8]
शस्त्राछेद्य[9] अदाह्य[10] ताहि ते ब्रह्माच्छर[11] कहि॥ १॥
अच्छर आतम ब्रह्म निच्छर परमातम जोउ[12]।
निराकार[13] निर्लेप[14] निरंजन[15] सखा[16] भाव दोउ॥
जिमि मसाल की ज्योति भेद पुनि तेहि[17] परकाशा।
लखे[18] पदारथ एक प्राप्ति पर ताप भी नाशा॥ २॥
आतम ब्रह्म अशक्त[19] शक्त[20] युत निरच्छर हय[21]।
महा[22] सादि अव्यक्त महा[23] काल प्रताप मय॥
पर ब्रह्म जेहि कहत मुनीश्वर भजत विज्ञ[24] सोइ।
शब्द अनाहद नित्य होत जहँ निरच्छर सोइ॥ ३॥

---

१ निर्गुण ब्रह्म। २ जीवात्मा। ३ निरच्छर ब्रह्म समर्थ हैं। ४हाथ पकड़े निरन्तर सहायक बने रहते हैं। ५ समझो। ६ अविनाशी। ७ अजन्मा। ८ आदि में इसे कोई रूप नहीं होता. भक्त होने पर भावानुकूल दिव्यरूप पाता है। ९ किसी शस्त्र से इसे काट नहीं सकते। १० जलता नहीं। ११ अच्छर अर्थात् जिसका नाश नहीं हो ऐसा ब्रह्म। १२ देखो, समझो। १३ दोनों रूप रहित हैं। १४ माया से अलिप्त हैं। १५ इन दोनों के स्वरूपों में माया का लेश भी नहीं मिला है। १६ पारस्परिक मित्र भाव। १७ मसाल में और उसके प्रकाश में। १८ बिचारने पर दोनों तत्वतः एक ही हैं। १९ शक्ति रहित। २० सामर्थ्य-वान।

कोटिन सूर्य[1] प्रकाश विशद शीतल कोटिन[2] शशि।
सुखानन्द[3] चिद्रूप शक्ति विज्ञान[4] ध्यान बसि॥
† अलख लखत सब काहु दारु तिय सूत्रधरनि जिमि।
विविध कला कर अंड आवरन सिमिटि धरत तिमि॥
* सहस रंग आसन आसीन परमातम रूप अन।
‡ लखत लखत लखि जाय ताहि अस को कवीश भन?
निर्द्वर ब्रह्म प्रताप कहत लघु[5] अर्थ अमित हय।
ज्यों मनि देखत अल्प[6] तासु उर[7] गज रथ हय मय॥

---

२१ है। २२ सचराचर सभी जीवों के शुभाशुभ कर्मों के द्रष्टा हैं। २३ काल के भी काल। २४ ब्रह्मज्ञानी। २५ जिस स्थान से २४ अथवा जो उन्हें भजे वही विश्व बन जाय।

† जैसे (दारु तिय) कठपुतली को नाचती हुई सब देखते हैं, परन्तु उसका नचाने वाला सूत्रधार परदे के पीछे छिपा हुआ किसी के देखने में नहीं आता है। उसी प्रकार कार्य रूप ब्रह्मांड दीख पड़ता है, परन्तु उसका कारण रूप निर्द्वंर ब्रह्म नहीं दीखता। वह तो "एकोऽहं बहु स्यामः।" अर्थात् मैं हूं तो एक ही, परन्तु बहुत रूप बनूँगा।" इस संकल्प के अनुसार अनंत प्रकार की सृष्टि फैला कर पुनः प्रलयकाल में सब सिमट कर एक ही रूप में स्थित हो जाता है।

(परिशिष्ट देखिये)

१ निरद्वर ब्रह्म कोटि कोटि सूर्य के समान प्रकाशवान। २ कोटि चन्द्र वत शीतल और निर्मल। ३ ज्ञानानन्दमय। ४ ज्ञानियों के ज्ञान विज्ञान के द्वारा तथा योगियों को ध्यान समाधि द्वारा वशीभूत होते हैं, ५ कहने में शब्द थोड़े हैं, समझने में आशय अपार। ६ छोटी सी। ७ भीतर कीमत इतनी अधिक कि जिससे हाथी, रथ, घोड़े आदि बहुमूल्य वस्तुएँ खरीदी जा सकें। * अगले पृष्ठ में।

* दोहा *

क्षर पर आतम ब्रह्म पर, परब्रह्म पर जान।
क्षर अक्षर निरक्षरौ, राम चरण एक आन ॥१॥
मोह क्षर चष में छयो, ज्ञान नयन सुख छार।
अभय अंध सुख क्यों लखै, परब्रह्मको पार ॥२॥

इति श्रीरसमालिकायां बोध शास्त्रे आत्म परमात्म पर संज्ञा वर्णनं नाम एकादशोऽप्रकाशः ॥

• (पिछले पृष्ठ का) हजार दल वाला कमल है। सब दल भिन्न भिन्न रंगों के हैं। मध्य कर्णिका के रत्न सिंहासन पर बिराजमान जो द्विभुज श्याम सुन्दर श्रीमैथिली रमण जू जो परात्परब्रह्म वे तो इन सबों से विलक्षण हैं।

१—माया से बड़ा जीव ब्रह्म है, जीव से बड़े निरक्षर निर्गुण ब्रह्म को जानो। ग्रन्थकार श्रीस्वामी रामचरणदासजी कहते हैं कि माया, जीव और निर्गुण ब्रह्म—इन तीनों से भी परे एक अन्य हैं। कौन? श्रीजानकी बल्लभलाल जू।

२—बाहरी चर्म चक्षु तो मायी की चकाचौंध से निष्क्रिय हो रहा है और ज्ञान रूपी अन्तर्दृष्टि पर विषय सुख का नश्वर आवरण पड़ा है। इस प्रकार बाहर भीतर के नेत्र जिसके चौपट हो रहे हैं, वह गँवार निर्गुण ब्रह्म से भी बड़े श्रीजानकी रमण जू के नित्य निकुँज विहार का परमानन्द क्या जाने?

✱ अथ अवकाश १२ ✱

✱ काव्य छन्द ✱

शब्द भेद सुनु वेद शब्द बहु भाँति कहत मुनि।
अविनाशी सब शब्द चारि गहि रहे मुख्य मुनि[1]।
जज्ञ[2] शब्द अरु हंस[3] शब्द, अध्यातम[4], अनाहद[5]॥
ब्रह्म[6] महा शब्दापितीत[7] एक पुरुष[8] संत वद[9] ॥१॥
वेद कर्म[10] बुध सुक्त[11] जज्ञ शब्दहि नित ध्यावहि[12]।
हंस[13] शब्द जोगीश विविधि यतनन[14] करि पावहिं॥
शुद्ध ज्ञान विज्ञान शब्द अध्यातम[15] जानै।
दास[16] प्रेम तेहि[17] जुक्त ब्रह्म[18] शब्दापि बखानै। २
शब्दातीत स्वरूप[19] शब्द मारग[20] जो जानै।
‡ लहे परम सुख अली[21] गली सतगुरु पहिचाने॥
बिन सतगुरु नहिं मिले[22] कोटि जनमापि[23] कर्मकरु।
† बिना तोष सुख कहां सिन्धु किमु सर सरितन्ह भरु॥

---

‡ परिशिष्ट देखिये

१ शास्त्र प्रणेता मुनियों ने शब्द के मुख्य चार भेद ग्रहण किये हैं। २ कर्मकांड–शास्त्र। ३ योग शास्त्र। ४ वेदांत दर्शन। ५ भक्ति शास्त्र। ६ हे वेदो! ७ सभी महाशब्दों से भी परे। ८ उभय विभूति नायक परात्पर ब्रह्म श्रीजानकीरमण मनहरणजू। ९ ऐसा पहुँचे हुये संतों का कहना है। १० वैदिक कर्मकांड के पंडित। ११ वेद मन्त्र वाले। १२ मनन करते हैं। १३ हंस शब्द वाच्य जीवात्म स्वरूप का साक्षात्कार। १४ ध्यान धारणा और समाधि। १५ अध्यात्मवादी शुष्क ज्ञानी। १६ भक्त। १७ अपने इष्ट स्वरूप के। १८ भक्ति रहस्य।

(अगले पृष्ठ में)

*** दोहा ***

शब्द[1] रूप अरु इष्ट[2] थल, अपर[3] लखै पर[4] केरि[5] ।
राम चरण सब सन्त[6] गुरु, वे[7] सतगुरु मन मेरि[8] ॥
† शब्द परे[9] रवि जगत निशि, दीप शशिहु नहिं[10] भोर
मैं[12] खद्योत[11] उलूक खल, भोर चहै कब चोर[11] ॥ १ ॥

इति श्रीरसमालिकायां बोध शास्त्रे शब्दातीत गोप्य लक्षण संज्ञो वर्णनं नाम द्वादशोऽवकाशः ॥ १२ ॥

---

१९ श्रीकौशलेन्द्र कुमार जू का । २० प्राप्ति परिचायिका रसिकाचार्यों की महावाणी । २२ यह रस—मार्ग । २३ कोटि कोटि जन्मों तक सत्कर्म करते करते हार जाँय ।

† समुद्र नदी तालाबों से कभी नहीं भर सकता । वह तो आप ही आप परिपूर्ण है । इसी प्रकार आप्तकाम बनकर संतोष धारण करने से ही दिव्य देश का रसानुभव संभव है ।

१ इस १२ वें अवकाश में वर्णित चारों भेद वाले शब्द-स्वरूप । २ अपने इष्ट श्रीजानकी रमण जू के दिव्य कुँज निकुँज सहित श्री-कनक भवन वाला विहार स्थल । ३ और और ज्ञातव्य विषय—जैसे रसमयी युगल केलि, साज समाज इत्यादि । ४ परस्वरूप अर्थात् युगल प्राण सर्वस्व प्रिया प्रियतम जू । ५ के । ६ रसिक संत एवं रस प्रदायक सद्गुरु की कृपा से । ७ सद्गुरु बिमुख । ८ मेरा मन । ९ चार प्रकार के उपर्युक्त शब्दों से परे युगल नाम रटन ही सूर्योदय के समान है । १० दीपक एवं चन्द्रमा के समान अन्य साधन प्रकाश तो करेंगे, पर संसार रूपी रात्रि को मिटा नहीं सकते । ११ बद्ध जीव मानो जुगनू, उल्लू पक्षी एवं चोर के समान हैं । रात्रि पसंद करते हैं । भोर नहीं चाहते । १२ पूज्य ग्रन्थकार का कार्पण्य तो देखिये ।

✻ अथ अवकाश १२ ✻

✻ काव्य छन्द ✻

सुनहु योग, वैराग्य, ज्ञान, विज्ञान अनूपम।
चतुर्व्यूह[१] प्रभु कृपा अगम[२] सतसंग सुगम[३] सम॥
कठिन योग वसि दूरि[४] भूरि[५] सुख दूरि[६] पूरि होइ।
प्राण अपान[७] समान भौंह[८] नासाग्र[९] दूरि[१०] होइ॥१
टाँकी[११] शब्द[१२] अनूप वज्र[१३] घांटी धरि फोरै।
शशिप्रति[१४] जलबिन पवन[१५] दीप यहि[१६] विधिचितजोरै
तहँ[१७] सरवर इक[१८] अमी सहस दल कमल प्रेम रस।
जेहि जन को जिय[१९] भँवर पियत जगतेहि गुलाम[२०] बस
तात[२१] भली वैराग[२२] चिता पर जरत[२३] रैनि दिन।
त्रिगुन सिद्धि ग्रह[२४] आप स्वर्गलखि पाक[२५] रहतभिन[२६]

---

१ जैसे बासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध भगवान के चतुर्व्यूह विग्रह हैं उसी प्रकार प्रभु-कृपा देवी जी के योग, वैराग्य, ज्ञान और विज्ञान चतुर्व्यूह रूप है। २ अपने पुरुषार्थ से अगम। ३ सत्संग के द्वारा सुगम। ४ गुप्त स्थल में योग का बास है। ५ किन्तु सिद्ध होने पर बहुत सुखानुभव होता है। ६ लम्बे अरसे के बाद सिद्ध होता है। ७ प्राणायाम के द्वारा प्राण वायु अपान वायु को समान में स्थित करे। ८ त्रिकुटी पर। ९ अथवा नाक की नोक पर। १० दृष्टि इतनी दूर पर निरोध करके रखे। ११ एक टक ध्यान। १२ ॐकार। १३ छः चक्र वाली गांठ। १४ जल में चन्द्रमा का प्रतिबिंब। १५ निर्वात दीप शिखा। १६ ऐसा ही अडोल बनाकर। १७ ब्रह्मांड अर्थात् मस्तक में। १८ अमृत सरोवर। १९ मन। शेष परिशिष्ट में

संचित[1] क्रिय[2] प्रारब्ध[3] तीनि[4] गति मिलेहु तजत[5] सोइ
श्रीरामचरण शिरमौर[6] मोर वैराग्य मान सोइ ॥ ३ ॥
ज्ञान[7] हंस सर[8] शास्त्र राम गुन[9] मुक्ताहल चुनि।
क्षीर शयन जस[10] क्षीर पियत तजि नीर तीन[11] गुन ॥
सकल काम[12] करि दूरि क्षमा[13] नित मनन राम यश।
तेहि पद को पद पीठ[14] रेनु मम शीश बीस[15] बस ॥४
धनि विज्ञान अनन्य[16] चराचर ईश[17] रूप रम।
पाप पुण्य सुख दुःख मित्र अरि नरक स्वर्ग सम[18] ॥
शीत उष्ण मानापमान सम[19] तोष[20] शान्ति घर।
जननि जनक हित बंधु मोर गुरु[21] बचन शीश पर ॥५॥

---

१ अगले जन्मों में भुगतने वाले। २ वर्तमान शरीर में जो कर्म बन रहे हैं। ३ जिस कर्म फल को वर्तमान शरीर में भोगना है। ४ तीनों प्रकार के कर्म फल। ५ वैराग्य रूपी अग्नि में जला देते हैं। ६ मेरे लिये शिरोभूषण के समान आदरणीय हैं। ७ ज्ञानी हंस पक्षी हैं। ८ शास्त्र मानो मान सरोवर है। ९ श्रीराघवेन्द्र गुण गण रूपी मोती चुगते हैं। १० श्रीक्षीरशायी भगवान की भाँति श्रीराम यश रूपी दूध पान करते हैं। ११ शास्त्र के त्रिगुणात्म विषय को जलवत त्याग कर। १२ लौकिक मनोरथ। १३ सदा क्षमा धारण किये रहते। १४ खड़ाऊँ की धूल। १५ बीसो विस्वे श्रेष्ठ। १६ 'देख ब्रह्म समान सब माहीं।' १७ 'सो अनन्य जाके असि, मति न टरइ हनुमंत। मैं सेवक सचराचर, रूप राशि भगवंत॥' १८ उनके लिये बराबर हैं। १९ एक समान हैं। २० संतोष और शांति के घर हैं। २१ ऐसे विज्ञानी की बात गुरु आज्ञा समान शिरोधार्य है।

❋ चंचरीक छन्द ❋

सुनु श्रुति[1] अभरन[2] भक्ति भरे॥
पिय यश[3] मलिते मन मल दलिते[4] प्रेम छलिक[5] छहरे।
नमित[6] दुकूले हरि अनुकूले शीलभ[7] जरित जरे॥
जावक[8] रागे योग[9] विरागे[10] नूपुर[11] शब्द रे।
कृत[12] मंजीरे रव[13] गंभीरे धीमति[14] भरित धरे॥ १॥
वलय[15] छमा सुज्ञानमपि[16] सविज्ञान सुकंकन करे।
नामपि[17] हारे भावति[18] भारे सूरति[19] सूत्र लरे॥
हरिजन विजने सुमन[20] षुभि[21] बने बेसरि[22] तुरि लहरे।
सद सत संगे अंबक[23] रंगे चाहस्य[24] रंग परे॥ २॥
तोषमनन्दं तिल कल विन्दं[25] मांगपि[26] गुननि भरे।
[1]पन परिकृत से सोंध[27] समृत से चर्चित तन सगरे॥

---

१ हे वेदो, सुनो। २ भक्ति महारानी सर्वालंकार संयुक्त हैं। ३ प्यारे का सुयश श्रवण तो उनका उबटन है। ४ जिससे मन की मलीनता छुट जाती है। ५ प्रेमाश्रु छलकना स्नान है। ६ नम्रता मानो उनकी साड़ी है। ७ प्रभु के रिझाने योग्य शील स्वभाव उस साड़ी के जड़ाऊ बेल बूटे हैं। ८ इष्ट चरणानुराग ही महावर है। ९ इष्ट स्वरूप में संलग्न मन। १० संसार से उपरत मन। ११ योग वैराग्य शब्दायमान नूपुर हैं। १२ इष्ट कैंकर्य कटि-किंकिणी है। १३ मुख से नाम यश कीर्तन ही किंकिणी ध्वनि है। १४ भावना पूर्वक। १५ छमा ही हाथ की चूड़ी है। १६ शास्त्र ज्ञान और अनुभूत ज्ञान ही कर के कंकण हैं। १७ हृदय में नामार्थ का अनुसंधान ही हृदय हार है। १८ खूब फबने वाली। १९ इष्ट ध्यान रूपी डोरे में पोही हुई।

(अगले पृष्ठ की पाद टिप्पणी देखिये)

छवि निधि पूरे[२८] कवि कुल दूरे[२९] दायति[३०] संजित सरे।
रामचरणजन जड़ हट[३१] छवि पन ज्यों शिशु शशिहिं[३२] अरे

*** दुर्मिला छन्द ***

सत संग न चाह चहूं फल वाहन[१] दाह दहै यश[२] मानमई।
† सुख अंड कटाह अगाह घटा पट फाटि गयो हरिदृष्टिभई
छल छोभ छई मद लोभ लई मन की[३] कलई मल दूर गई।
चलु रामचरण तेहि संगति में जहँ राम कथा नित होत नई
जहँ संत सभासद गुष्टि[४] सदा दर[५] जामिक ज्ञान विरागदई
सिर छत्र क्षमा हरिनाम जमा[६] मतिशांति मनोरम तोषसई[७]
सम[८] आसन रामचरण तृनके[९] घर प्रेम दया दरबार[१०] नई
तेहिद्वार हिलै[११] तबभीख मिलैजोइलगन ते वेदनमांगि[१२] लई

---

२० ऐकांतिक साधना से निर्मल किया हुआ मन। २१ कान का लौंग। २२ तुरीयावस्था नाक का बेशर।

२३ नेत्रांजन। २४ सत्संग की चाह इस काजल का गाढ़ा रंग है। २५ संतोष तो कपोल तिल है और (अनन्द) रसानुभव ही वेंदी है। २६ माँग भी इष्ट गुण गण रूपी मोती से भरा है। † समृत परिकृत पन = मानसिक सेवा का दृढ़ नियम २७ अँगराग। २८ शोभा सम्पन्न। २९ बचन अगोचर। ३० भक्ति। ३१ ऐसे भक्ति शृङ्गार के लिये मच जाते हैं। ३२ जैसे बच्चा चन्द्र खेलौना के लिये।

१ देने वाला। २ मानापमान से संतप्त हृदय हरि यश से जुड़ाता है। ३ बहुविधि हृदय-यवनिकाएँ। ४ सत्सङ्ग महाराजके दरबार में सन्त तो सभा सदस्य हैं। ५ ड्योढ़ी के पहरेदार। ६ बुद्धि रूपी खजाने में। ७ बढ़ते जाते हैं। ८ समत्व भाव ही सिंहासन है। ९ पर्णकुटी ही राज महल है। १० मंत्री। ११ प्रवेश करे। १२ श्रीशेषजी से। † परिशिष्टमें

* दोहा *

संत संग पय पारसो, जुग जुग दीष समीप।
तेहि रंग मिले न बिन मिले, मद जल लोह सुदीप ॥१॥
वेद सिंधु घन संत मुख, स्वाति श्रवत यश श्याम।
खल अहि चातक सीप जन, तुम सुर तरु अभिराम ॥
धाम धाम रस धाम रस, नाम ब्रह्म को भेद।
संत समाज उदार सुनि, वेद भयो निष्खेद ॥ ३ ॥
पुलक गात लोचन सजल, करि प्रणाम कर जोरि।
वेद चार आनन्द भरि, अस्तुति करत बहोरि ॥ ४ ॥

इति श्रीरसमालिकायां बोध शास्त्रे योग विराग ज्ञान विज्ञान भक्ति निरूपणे सतसंग वरननो नाम त्रयोदशोऽवकाशः ॥ १३ ॥

---

१ सत्संग के समीप अभिमानी व्यक्ति, दूध के पास जल, पारस के पास लोहा, जलते दीपक के निकट शीतल दीपक, युग युगांतर तक भले पड़े रह जायँ, बिना मिले क्रमशः सज्जन, दूध, सोना और प्रज्ज्वलित दीपक नहीं बन सकते।

२ वेद रूपी समुद्र से सन्त रूपी बादल श्रीरामयश रूपी जल लेकर स्वाती बूँदें बरसा देते हैं। वही खल रूपी सर्प–मुख में विष, अनन्य भक्त रूपी पपीहा मुख में तृप्ति, परोपकारी सज्जन रूपी सीप-मुख में काव्य मोती बन जाती हैं। हे मन, इष्ट यश तो तुम्हारे लिए मनोहर कल्पवृक्ष ही हैं।

३ सभी भवद्धाम रसागार हैं। भेद केवल अलग २ बिहार लीला एवं नाम में है। सन्त समाज की महिमा एवं उदारता पूर्ण सभी प्रश्नों के मनोहर उत्तर पाकर वेद संशय रहित हो गये।

❋ अथ अवकाश ११ ❋

॥ प्रमाणिका छन्द ॥

नमामि[1] रास के रसी[2], सखीश[3] ईश मुर्वसो[4]।
सुधा[5] श्रवत मुखं[6] शशि, समस्त ताप में[7] नशो ॥१॥
प्रभू[8] जनाग्रणी प्रभो रसाग्रणी[9] ग्रणी नमो।
दयाग्रणी क्षमाग्रणी योगाग्रणी समाग्रणी[10] ॥ २ ॥
नतोऽस्मि[11] देवता परं[12] भूमण्ड सीकरा[13] धरे।
त्वमेक ब्रह्म मक्षरं कृतांड़ भांड़[14] सक्षरं ॥ ३ ॥
गुणाब्ध[15] निर्गुणात्मकं,[16] अव्यक्त[17] व्यक्त[18] भाविकं
नपारत्वं हमादिकं सहस्र कल्प वादिकं † ॥ ४ ॥
निरीह[19] ब्रह्म निष्कलं[20] नतोञ्ज लीदु[21] निर्मलं।
सनाम भूषिते[22] बलं सदास्तु प्रेम[23] निश्चलं ॥ ५ ॥

---

१ वेद कहते हैं कि मैं प्रणाम करता हूँ। २ रसास्वादी। ३ यूथेश्वरी। ४ श्रीप्रियतम जू आपके हृदय में बसते हैं। ५ रसकथा रूपी अमृत चूता है। ६ आपके मुख चन्द्र से। ७ मेरा। ८ भगवद्भक्तों में शिरोमणि। ९रसिकाधिराज शिरताज। अग्रणी = अग्रगण्य, सबसे बड़ा। १०समदर्शियों में सर्वश्रेष्ठ। ११ मैं प्रणाम करताहूँ। १२श्रेष्ठ। १३ब्रह्मांड को रजकणके समान धारण कियाहै। १४ प्रलयांत में ब्रह्माण्ड को नष्ट कर देते हैं। १५ दिव्य गुणों के समुद्र। १६ मायिक त्रिगुण से रहित। १७ अगोचर सामान्य जनों को। १८ पर रसिकों के लिये प्रगट।

† हमारे समान सभी वक्ता हजारों कल्प तक आपके गुणगान करते रह जायँ, पार नहीं पावेंगे। १९ निर्लोभ। २० अखंड। २१ नतः + अँजलि + इन्दु निर्मलं = निष्कलंक चन्द्रमा समान गौरांग विग्रह वाले आपको मैं हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। २२ श्रीराम-नाम के प्रभाव से आप ब्रह्माण्ड भार उठाने के बल से युक्त हैं। २३ नामानुराग।

अकाशमग्नि वायुवत, जथाब्ज कै त्वमे जगत ।
त्वदंघ्रि कंज जे भजत, न तेपि जगत ज़ाल गत ॥ ६ ॥
दिनेश वंश[1] मंडनं, सौमित्रि[2] शत्रु खंडनं[3] ।
अनंत संत रंजनं,[4] सुरालि[5] शोक भंजनं ॥ ७ ॥
एकदाशीस[7] भक्ति जो, दसौ[8] दशांत[9] संग सो ।
† बसै सो धामदा मना, स रामचरण कामना ॥ ८ ॥

*** हरि गीत छन्द ***

जय जय अनंत अनंत गुन नहिं पार कवि कोविद[10] लहै ।
परब्रह्म तारन तरन आरत[11] हरन आरत जो चहै ॥
‡ सोइ देहु पुर सर रास जल भरि मीन मम मन होइ रहै ।
रट मेघ चातक चन्द पूर चकोर जिय गहि सोइ रहै ॥ १ ॥

६—आप जगत में रहते हुए भी इससे कैसे अलिप्त हैं ? जैसे आकाश धूल धूम से, पवन शीत उष्ण से, कमल जल से । पुनः अग्नि के सम्पर्कमें जो आताहै उसे वह अपने समान बना लेताहै, वैसे ही जो आपके चरण-कमल की आराधना करता है, उसे भी आप जगत जाल में नहीं पड़ने देते ।

† पूज्य ग्रन्थकार की मनोकामना है कि भगवद्धाम को देने वाली उपर्युक्त सारी भक्तियां हमारे मन में बास करें ।

‡ सभी आर्त भक्तों की मनोंवांछा पूरी करते हैं, तो मुझे भी यह दीजिये । श्री अवधपुर रूपी सरोवर में जो रासरस रूपी जल भरा है, उसमें मेरा मन मछली बनकर डूबा रहे । पपीहेकी भांति अपनेघनश्याम के लिये मैंभी रट लगाऊँ । चकोर चन्द्रवतमैं भी प्रिय दर्शनकरता रहूं ।

१ सूर्य वंश को भूषित करने वाले । २ श्री सुमित्रा पुत्र । ३ नाश-कर्त्ता । ४ प्रसन्न करने वाले । ५ देव बृन्द । ६ नाश कर्त्ता । ७ प्रौढ़ा भक्ति । ८ नवधा सहित प्रेमा । ६ परा । १० बिद्वान । ११ विपत्तिभंजन ।

कहि एवमस्तु[1] कृपालु[2] पुनि कर जोरि श्रुति बोलत भये।
तव कृपा कृपानिधान हम संदेह संशय सब गये ॥
एक बात बूझहिं तत्तु[3] अवरण कहहु प्रभु थोरिह मगे[4]।
सुनि रामचरण प्रसन्न होइ प्रभु धाम तत्व वरनन लगे ॥२॥

॥ घनाक्षरी छन्द ॥

‡ क्रम ही ते दून दून जानि लेव छोनी[5] पर,
महर्लोक एक कोटि योजन बखानिये।
महर्लोक ऊर्द्ध[6] जुग[7] कोटि जन लोक जानि,
तप लोक सत्य लोक पुनि कौमार जानिये॥
उमा लोक शिव लोक सप्तावरण ताके पर,
† प्रथिवी को तत्व सो पचास कोटि मानिये।
क्रम ते दश गुनो जानि कं[8] अग्नि पवन खं[9],
*अहंकार पृथिवी कंध गो अविद्यारूप मानिये॥

---

‡ पिछले से आगे वाले क्रमशः दूनी दूरी पर हैं।

† श्री शिव लोक से ऊपर वाले सप्तावरण का वर्णन करते हैं। पहला पृथ्वी तत्व है। यह पचास कोटि योजन मोटी है। उसके ऊपर जल तत्व उससे दश गुणा अर्थात् ५०० कोटि योजन मोटा है। इसी प्रकार अग्नि तत्व ५००० कोटि योजन, पवन तत्त्व ५०,००० कोटि योजन, आकाश तत्त्व पांच लाख कोटि योजन, अहंकार तत्त्व पचास लाख कोटि योजन तथा सबसे ऊपर मूला प्रकृति तत्त्व पांच करोड़ कोटि योजन मोटा है। * परिशिष्ट देखिये।

१ ऐसा ही हो। २ कृपामय श्री शेष जी। ३ पृथ्वी जलादि तत्त्व वाले सप्तावरण। ४ संक्षेप रूप से। ५ पृथ्वी। ६ ऊपर। ७ दो कोटि योजन ऊपर। ८ जल। ९ आकाश।

सुनियें अविद्या[1] पार विद्या पर[2] राजित गो[3],
ग्रीव अग्र योजन अनंत[4] लोक धाम है।
तापर अनंत उच्च तेज रूप[5] धाम योग,
तासु ऊर्ध्व[6] धाम बास वासुदेव नाम है॥
रामचरण विद्या पर धाम जो समीप वाम[7],
ताके[8] पर धाम एक श्याम संग[9] वाम है।
†जो पै पुरान वेद संहिता प्रमाण नाहीं,
तौ जन मुख मेरे खैंचि देव "चरण" चाम है॥

॥ हरि गीत छन्द ॥

सुनु ब्रह्म[10] ब्रह्म बिहार[11] जस गुन रूप नामऽस को कहै।
मति[12] सरिस मैं बरनी यथा खग उड़त नभ गहि[13] नहिंलहै
सुनि निगम सकल अनूठ[14] गद्गद जयति जयजयजय भनी
बहुभाँति पूजा कीन्ह संपुट[15] पानि करि कहि सुनु धनी[16]॥

---

† महाराज श्री रामचरण दास जी का कहना है कि मैंने जो कुछ लिखा है, इनके प्रमाण वेद, संहिता तथा पुराणों में न मिलें, तो मेरी जिह्वाको मुखके अन्दर चाम मात्र समझकर पाठक खैंचकर निकाल डालें।

१ एक पाद विभूति से ऊपर। २ अविनाशी लोक। ३ ब्रह्मांड रूपी गौ के कंधे से आगे। ४ महाविष्णु। ५ योगेश्वर महाशम्भु का तेजोमय धाम। ६ उसके ऊपर। ७ अर्थात् श्रीराधाकृष्ण का नित्य वृन्दावन धाम। ८ सर्वोपरि। ९ यहां अनन्त सखिगण परिसेवित श्रीजानकी रमण जू नित्य विहार करते हैं १० हे वेदो! ११ श्री जानकी वल्लभलाल जू के नाम, रूप, गुण, यश जैसे हैं। १२ अपनी बुद्धि के अनुसार। १३ उड़ते हैं सही, पर आकाश का अंत नहीं पाते। १४ सभी विलक्षण वस्तुएँ। १५ हाथ जोड़कर। १६ हे स्वामिन्!

करिकृपा अबनहिं होइ भ्रम जेइ[१] सकलजिय[२] रागबसकिये[३]
रुखपाइ पद सिरनाइ रस[४] भरि उभय[५] निजनिजथलगये ॥
शुभ शेष श्रुति संवाद जे नर सुनहिं समुझहिं गावहीं ।
† संसार घोर पतंग इवतर परम सुख सो पावहीं ॥ २ ॥

॥ सोरठा ॥

श्रोता वक्ता पूर, यथा तुला को तौलिवो ।
युगल सेन समसूर, समर पूरि रिपु भ्रम मरत ॥ १ ॥
शेष वेद संवाद, जो सत गुरु कहते नहीं ।
केहि विधि मिटत विषाद[६], राम चरण कलि कपट[७] घर ॥

इति श्री रसमालिकायां बोध शास्त्रे बेद स्तुति
लोक संज्ञा वरणनो नाम चतुर्दशोऽवकाशः ॥१४॥

---

† प्रचंड सूर्य के समान संतप्त करने वाले संसार से मुक्त हो जायेंगे। यथा—'ते संसार पतंग घोर किरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः ।'

१—युद्ध करने वाली दोनों पक्ष की सेनायें समान रूप से सूरवीर हों, तो शत्रु मारने में युद्धोत्साह पूरा पड़ता है। श्रोता जैसा जिज्ञासु हो, वक्ता वैसे ही सर्वज्ञ हों, तराजू के पल्ले में दोनों बराबर तुलें, तो भ्रम निवृत्ति में मजा छनता है।

१ जिस भ्रम ने। २ सभी प्राणियों को। ३ संसार में बांध रखा है, ४ युगल विहार भावना तथा युगल प्रेम रस में छक कर। ५ श्रोता-वक्ता। ६ संशय रूपी खेद। ७ हृदय तो कलिकाल जन्य दंभ, छल का अड्डा है।

ॐ ❋ अथ अवकाश १५ ❋

॥ रूप चौपाई छन्द ॥

मैं निजहीं सतगुरुहिं निहोरी[१]। तीनप्रश्न प्रभुकहहु बहोरी[२]
मिटेउ कवन थल[३] वेदविषादा। अवर[४] कतहुँ यह भा संवादा
कहहु अथर्वण केहि सन[५] पाई। थोरे मँह सब कहहु बुझाई॥
† क्षीर सिंधु तट मणिमय दूरी। दिव्य वेदिका पर बट रूरी॥
प्रगटहिं प्रभु जेहि वेद पुकारा। तेहि थल भा संबाद उदारा॥
गोदावरि तट सुभग सुहाई। सदा एक रस वरणि न जाई
तरु रसाल[६] एक परम सुहाई। तहँ हनुमत कुंभज[७] प्रति गाई
शंभु उमा नंदीश्वर पाहीं। कहेउ गहेउ सो तिन मनमाहीं
‡ एक समय नन्दी उर जाई। वेद अथर्वण तहँ यह पाई॥
सुनेउ सकल जिय भा संतोषा। यथा[८] चकोरकुमुदशशिपोषा

---

† क्षीर समुद्र के किनारे कुछ दूर पर एक मणिमय बेदिका है। उस पर एक सुन्दर बट वृक्ष है। यहीं ब्रह्मा जी के सहित देवता मुनि मिलकर सामूहिक प्रार्थना करते हैं, तो प्रभु अवतार लेने की आकाशवाणी करते हैं। उसी जगह वेदों के पुकारने पर शेषजी ने प्रगट होकर यह उदार सम्बाद किया।

‡ परिशिष्ट देखिये।

१ विनय पूर्वक पूछा। २ पुनः। ३ यह शेष वेद संवाद किस जगह हुआ। ४ इसके अतिरिक्त अन्यत्र भी। ५ किससे सुना कि श्री-शेष जी रस मर्मज्ञ हैं ? ६ आम का पेड़। ७ यहीं श्री अगस्त्य जी के आश्रम में पधार कर श्री हनुमत् लाल जी ने मुनिराज से यही बार्ता सुनाई थी। ८ जैसे चन्द्रमा चकोर और कुईं को सन्तुष्ट करते हैं।

॥ दुर्मिला छन्द ॥

सतसंगजटी[1] मति मोह[2] सटीजगप्रीति[3] घटीविधि[4] अंकफटी
तप दान[5] लटी जप जोग हटी[6] हटके हटकीजगजोर[7] भटी
विधि लोक[8] मटी सब कर्म कटी भवकी[9] सटकी हरिनाम रटी
रस[10] रामचरणनिपटीसटटी[11] नचमुक्तिनटीजहँभक्ति[12] हटी
सद कर्म चटी[13] नकटीनिकटी भटकादि[14] जटीभजुसंत डटी
जगजानिघटी[15] तनुफाटि[16] कुटीजगवेलि[17] कीटचलु संतबटी[18]
विषयानिछटी[19] जगरीति[20] झटी कटुभेद[21] टुटीरहु संत तटी[22]
सब धर्म[23] खटी गुन ज्ञान अटी[24] प्रभुकी पटुता[25] सत संग पटी

---

१ संतों के समागम में शामिल होने पर। २ बुद्धि से मोह पटल सरक याने हट जाता है। ३ विषयानुराग घट जाता है। ४ ब्रह्मा लिखित कर्म रेखा मिट जाती है। ५ तप दानादिक पुरुपार्थ परक सत्कर्म में अरुचि हो जाती है। ६ हठ योग। ७ जगत रूपी अति प्रवल वैरी जबरन टाल दिया जाता है। ८ ब्रह्मलोक का सुख भी मिट्टी समान तुच्छ जान पड़ता है। ९ लौकिक वासना मिट गई। १० रसमयी उपासना। ११ हृदय में अति चिपक जाती है। १२ जहाँ भक्ति सुहागिन की शान है, वहां मुक्ति नर्तकी को कौन पूछे? १३ शुभ कर्म रूपी सराय में हरिभक्ति हीन सुकृति तो नककट्टी नायिका की भांति अशोभित है। १४ क्योंकि ऐसे सत्कर्म नाना योनियों में भटकाने वाले हैं। १५ तुच्छ। १६ ऐसा बैराग्य कि शरीर पर फटी गुदड़ी हो, घास की कुटिया में निवास हो। १७ जन्म मरण रूपी लता की जड़ कट जायगी। १८ संतों द्वारा निर्दिष्ट मार्ग से। १९ छूट गये। २० संसार में उलझाने वाली शैली झड़कर खतम। २१ अपने और पराये विषयक कड़ुआ भेद भाव। २२ निकट। २३ भगवत्प्राप्ति में जो सहायक नहींहैं, ऐसे धर्म कर्म खट्टे लगने लगे। २४ हृदय में अटेंगे, ठहरेंगे। २५ जीव हित साधन में जैसे प्रभु कुशल हैं, उस परतर के योग्य तो सत्संग ही है।

* हरिगीत छन्द *

†यम नेम पूजा पाठ जप जोगादि क्रम उत्तम घनो।
मोक्षादि सब नहि तुलहि जो पल एक संत संगति बनो॥
‡जेहि संग पाइ कुबेर मैं भीक्षा न मिल कोटिन गनो।
तजि सकल कर्मा कर्म गति सतसंग करु परिमम मनो॥

* दोहा *

राम चरण सतसंग बिनु, अंग भंग नहिं होइ।
अंग भंग बिनु कर्म जड़, धरे रहत सब कोइ॥ १॥
तीन उपर आठहु तई, शर अवकाश की बात।
खोलि कहव जनि पियव रस, अपर कहव विख्यात॥ २॥

---

† 'तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग॥'

‡ पूज्य ग्रन्थाकार अपना अनुभव कहते हैं। 'पहले मैं ऐसा ज्ञान रंक था कि माँगने पर भीख भी नहीं मिलती थी। अब सत्संग पाकर मै ज्ञान विज्ञान रूपी धन में कुबेर के समान करोड़ों में एक गिना जाता हूँ। अतः आप अपने मन को आदेश देते हैं कि समस्त शुभा-शुभ कर्मों को त्याग कर अच्छी प्रकार सत्संग करे।

१—श्री स्वामी रामचरण दास जी कहते हैं कि बिना सत्संग किये शुभाशुभ कर्मों का नाश नहीं होता। यद्यपि ये कर्म जड़ हैं, फिर भी जब तक इन शुभाशुभ कर्म कृत पाप पुण्य बने रहेंगे तब तक संसार में सबको वे ही बाँधे रहेंगे।

२—तीसरे अवकाश के बाद से आठवें अवकाश तक बीच वाले पांच [शर] अध्याय के विषय अति गोपनीय हैं। इसे प्रगट करके किसी को मत कहिये। स्वतः रसानुभव करिये। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ के अन्य विषय चाहे जितना प्रगट करें।

पर भाषा को काटि कै, अपने यशहिं बढ़ाइ।
रामचरण ते स्वान कवि, कबहु न पेट अघाइ ॥ ३ ॥
श्रुति गिरि कन्दर में रहत, कहत अनूठी बात।
रामचरण ते सिंह कवि, नव गयंद नित खात ॥ ४ ॥
काव्य धर्म पूर्वा परहि, अर्थाशय नहिं जान।
ते शिशु दूषण देत हैं, बिनु सत गुरु के ज्ञान ॥५॥
संवत सत अष्टादशो, चौवालिस दिन सूर।
शरद विजय दशमी विमल, रहस ग्रन्थ भा पूर ॥ ६ ॥

इति श्री रसमालिकायां बोध शास्त्रे संवाद स्थले सद्गुरु शब्द बोध संज्ञा वरणनोनाम पंचदशोऽवकाशः ॥१५॥

३—जो अपने सुयश के लिये अन्य कवि की उक्ति चुराकर अपनी कविता में मिलाते हैं, वह कवि नहीं कुत्ता है। पत्तल चाटते फिरें, पेट कभी नहीं भरेगा। आत्म सन्तोष, स्वांतः सुख नहीं होगा।

४—सिंह कवि तो वेद रूपी पर्वत गुफा में रहता है। अपूर्व मौलिक भाव कहेगा। जैसे सिंह नित्य नये २ गजेन्द्र को खाता है, वैसे यह कवि ऊँचे ऊँचे भावों को ग्रहण करता रहेगा।

५—दूसरे की कविता में दोष दिखाने वाला वह वाल-वुद्धि निगुरा है जिसे न तो काव्य लक्षण का ज्ञान है, न ग्रन्थ के अगले पिछले प्रसङ्गों की जानकारी रखता है, न अर्थ एवं आशय का अभिज्ञ है।

६—सम्वत् १८४४ रविवार, शरद ऋतु की स्वच्छ विजया दशमी को इस रहस्य ग्रन्थ का लिखना पूरा हुआ।

श्रीसीताराम, श्रीसीताराम।

॥ परिशिष्ट भाग ॥

पृष्ट ६ । छंदांक ३ ॥ "पुरुष तेज को रूप" श्री महाशंभु हैं ।

राघवस्य गुणो दिव्यो महाविष्णुः स्वरूपवान् ।
वासुदेवो घनीभूतस्तनु तेजो महाशिवः ॥

अर्थात् श्री राघवेन्द्र जू के दिव्य गुणों के मूर्तिमान विग्रह श्री महाविष्णु हैं, उनके सर्व व्यापी स्वरूप श्री वासुदेव तथा उनके मंगल विग्रह के घनीभूत तेज श्री महाशंभु हैं ।

पृष्ट ११ । छंदांक ८ ॥ "विधि दिन प्रति......न पावे ।

कलियुग की आयु ४३२००० वर्षों की है । उससे दूनी द्वापर, तिनगुनी त्रेता तथा चौगुनी सत्ययुग की है । चारों युगों की एक चतुर्युगी, ७१ चतुर्युगियों का एक मन्वन्तर तथा १४ मन्वन्तरों का एक कल्प अर्थात् ब्रह्मा का दिन होता है । ब्रह्मा के दिनांत में ब्रह्मांड रूपी गो का तो नाश हो जाता है, पर त्रिपाद विभूति रूपा महामनि बनी रहती है । वह अविनाशी है ।

पृष्ट २३ । छंदांक ५ ॥

"क्षर अक्षर गुन अगुन तुरीय सम काल चोर नहिं ।"

अर्थात् माया स्वरूप, जीव स्वरूप, ब्रह्म के निर्गुण एवं सगुण स्वरूप, तुरीयावस्था की ब्राह्मी दशा, समत्व भाव वाली विज्ञान दशा–इन सबों से श्री साकेत धाम विलक्षण है । वहां जन्म, जरा मृत्यु आदि नहीं है ।

पृष्ट ३३। प्रथम दोहा॥

सूई के छोटे से छिद्र होकर हाथी जैसे विशाल जीव का प्रवेश करना असंगत है, वैसे ही सामान्य जन की संकीर्ण प्राकृतिक बुद्धि में श्रीजानकीरमणजू का सौन्दर्य-सिन्धु स्वरूप नहीं अँट सकता। हां प्रभु, कृपा से प्राप्त होने पर एक क्षुद्र चींटी भी कल्प वृक्ष का फल खा सकती है। एक सामान्य व्यक्ति भी वह रूप रस पान कर सकता है।

पृष्ट ४२। छंदांक ३॥

"सो लहहि जिन शृङ्गार रस भरि अपर रस बाहिर धरे।"

उस रास रस का आनन्दानुभव ध्यानावस्था में उन सौभाग्यशाली सज्जनों के द्वारा आज भी संभव है, जो सभी अन्य रसों को त्याग कर केवल श्रङ्गार रस में छके रहते हैं।

पृष्ट ४७। छंदांक ४॥

"सुमति कहति सुरति वलि .... मौन भैसि क्योंरी ?"

यहां बुद्धि और चित्त का सम्वाद है। बुद्धि रास विहारी श्री मैथिली रमण जू की मनमोहिनी रूप-माधुरी पर रीझकर चित्त से कहती है "तेरी वलैया लेऊँ। यह छवि निरंतर ध्यान में दिखाती रह।" चित्त ने कहा "संसार से रुख फेर कर इधर टकटकी लगा।" जगज्जाल में उलझी बुद्धि इस कार्य में अपने को असमर्थ पाकर चुप्प हो गई। चित्त ने फटकारा। क्योरी ? बोल! करेगी न ऐसा ? बोलती क्यों नहीं ?

पृष्ट ४६। छंदांक २॥ पूरे छंद का भाव।

जल क्रीड़ा काल में श्री लड़ैती लाल जू परस्पर अधर पान करने के समय उलझ गये हैं । रूपकालंकार द्वारा इसी झाँकी का चित्रण किया गया है। दो चन्द्रमा [मुख] परस्पर में भिड़े हैं। तब चन्द्र वाहन मृग [नयन] कैसे बाज आवें? उनमें भी मुठभेड़ होगई। देखादेखी दोनों गुरु बृहस्पति [वेसर] और शुक्राचार्य [नाशामणि] में भी हाथापाई हो गई। नौबत यहां तक पहुंची की सूर्य [कुण्डल] से सूर्य [ताटंक] अड़ गये। दंगे को शांत करने के लिये काम कोतवाल ने फसादियों को नागपाश [केश] में कस कर बांध दिया। तब सब झगड़ा छोड़ सुखी हुये।

पृष्ट ५५। छंदांक २॥

'कतहुँ दिव्य गुन तेज दृष्टि कहुं रूप भेद नहिं।'

अर्थात् पाचों भगवद्धाम के भगवत्तत्व में भेद नहीं है। क्योंकि सब श्री राघवेन्द्र जू के ही प्रतिरूप हैं। कहीं (महाविष्णु जी) तो आपके दिव्य गुण हैं, कहीं [महाशंभु जी] आप के तेज हैं, कहीं (श्री वासुदेव) आपकी व्यापक दृष्टि हैं, तो कहीं (श्रीकृष्ण) आपके शृङ्गार रूप हैं। देखिये परिशिष्ट का प्रारम्भिक श्लोक।

पृष्ट ५६। छंदांक ३॥

'परम धाम सुख सहित नाम के मध्य रहे हलि।'

राम नाम्नि स्थितास्सर्वे भ्रातरः परिकरास्तथा।
गुणानां निचयं देवि तथा श्री धाम मंगलम्॥
—आदित्य पुराण।

पृष्ट ५७ । छंदांक ५ ॥

'अर्ध नाम लिखि गिरिन्ह आप आपहि जुरि जाई ।'

अर्थात् श्री नल जी के स्पर्श करने पर पर्वत समुद्र में तैरते तो थे, पर एक साथ जुटकर पुल रूप नहीं बनते थे। तब श्री हनुमतलाल जी ने एक पहाड़ पर 'रा' दूसरे पर 'म' लिख दिया। दोनों जुट गये। इसी प्रकार सभी पहाड़ों को नामाक्षर लिखकर जोड़ा गया।

पृष्ट ५८ । छंदांक ८ ॥

रकारोनल बीजं स्याद्ये सर्वे बड़वाद्यः।
कृत्वा मनो मलं सर्वं भस्म कर्मं शुभाशुभम् ॥
अकारो भानु बीजं स्याद्वेद शास्त्र प्रकाशकः।
नाशयत्यथ सदीप्त्या विद्यते हृदये तमः॥
मकारश्चन्द्र वीजं च पीयूष परिपूर्णकम्।
त्रितापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥

—श्री महारामायण।

पृष्ट ५९ । छंदांक ११ ॥

'जग्र शब्द अध्यात्म अर्थ······एक ब्रह्म परि ॥'

सब प्रकार के शब्द श्री राम नाम के अंशांश से प्रगट होते हैं। शब्दों के भेद अवकाश १२ में देखिये।

यज्ञ शब्द में ॐ की प्रधानता होती है। 'राम नाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्ष दायकः। 'अर्ध मात्रकरि हंस (योग)'
'रकारो योगिनां ध्येयो गच्छंति परमं पदम्।'

'अध्यात्म (वेदांत) अर्थ।' 'अकारो ज्ञानिनां ध्येयस्ते सर्वे मोक्षरूपिणः।'–श्री महारामायण के उद्धृतांश।

पृष्ट ६०। छंदांक २॥

मुक्ति स्त्री कर्णपूरौ मुनि हृदय वयः पक्षती तीर भूमौ।
संसारापार सिन्धोः कलि कलुष तमस्तोम सोमार्क विम्वौ॥
उन्मीलत्पुण्य पुञ्ज द्रुम ललित लोचने च श्रुतिनां।
क्षामं रामेति वर्णौ शमिह कलयतां संततं सज्जानानाम्॥

पृष्ट ६४। छंदांक ३॥

'कहत मीमांसा बात ब्रह्म ब्रह्मांड रूप चर।'

तात्पर्य यह है कि प्रलयांत में ब्रह्मांड अदृश्य होने से यह नाशवान सा प्रतीत होता है, पर विचारने से यह नश्वर सिद्ध नहीं होता, क्योंकि सृष्टि काल में यह पुनः दृश्य होता है। इस से यह अनुमान किया जाता है कि प्रलयांत में सूक्ष्म रूप से तथा सृष्टि होने पर स्थूल रूप से इसकी स्थिति रहती है। इसका अभाव कभी नहीं होता। अतः यह भी ब्रह्म तत्त्व ही है।

पृष्ट ७३। छंदांक २१॥

'जो वनिता पति लहै पिता कुल रहै कवन विधि?'

किसी कन्या के विवाह हो जाने पर वह पितृ कुल से निकल कर पति कुल में प्रविष्ट हो जाती है। "पति गोत्रेण गोतृका।" उसी प्रकार अद्वैत अक्षर ब्रह्म से प्रगट जीव तत्त्व जब प्रभु का भक्त बन जाता है, तो अपनी भावना के अनुरूप दिव्य शरीर से प्रभु का ही होकर रह जाता है।

पृष्ठ ७७। दूसरा दोहा ॥

अनन्य भावना दो प्रकार की होती है। एक अद्वैतवादी ब्रह्म ज्ञानियों की, दूसरी भक्तों की। ब्रह्मज्ञानी चराचर प्राणियों के साथ साथ अपने आपको भी ब्रह्म ही मानते हैं। भक्त चराचर में अपने इष्ट स्वरूप की भावना करते हैं, पर अपने को सबों का सेवक मानते हैं। पूज्य ग्रन्थकर्त्ता कार्पण्य पूर्वक कहते हैं कि संसार में एक मात्र भाग्यहीन मैं ही हूँ जिसमें उभय प्रकार में कोई भी अनन्यता नहीं आई।

पृष्ट ७४। छंदांक ५ ॥

"लखत लखत लखि जाय ताहि असको कवीश मन!"

निरक्षर अव्यक्त ब्रह्म के अनुसन्धान करने वाले सुदीर्घ कालीन चिन्तवन ध्यान करने के बाद उनका अनुभव कर पाते हैं। परन्तु उनके स्वरूप का शब्द चित्र नहीं बना सकते। चाहे कितना भी बड़ा कवि क्यों न हो, निरक्षर ब्रह्म का स्वरूप-निरूपण शब्दों में उतार नहीं सकेगा।

पृष्ट ८१। छंदांक ३ ॥

लहे परम सुख अली गली सतगुरु पहिचाने॥

रस प्रदायक आचार्य के कृपा-कटाक्ष के द्वारा परिचय कराने पर सखि-जन-सुलभ रस मार्ग प्राप्त होता है। इस मार्ग से ध्यान करने पर युगल बिहार भावना वाला परमानन्द अनुभव सिद्ध होता है।

पृष्ट ८२। दूसरा दोहा ॥

'राकापति षोड़श उअहिं, तारा गन समुदाइ॥

सकल गिरिन्ह दव लाइअ, बिनु रवि राति न जाइ॥
ऐसेहि हरि बिनु भजन खगेसा। मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा॥

पृष्ट ८३। शब्दांक २० से शब्दांक २६ तक के छूटे अर्थ।

२० जिस योगी की जीभ भ्रमर बनकर उस मस्तक वाले सहस्र दल कमल से टपकने वाला अमृत पान करता है, संसार दासवत उसके वशीभूत हो जाता है। २१ हे वेदो! २२ वैराग्य रूपी सुन्दर चिता पर। २३ दिन रात अपने मनो-मल को जलाता रहता है। २४ त्रिगुण वाली सिद्धियां उसे दुष्ट ग्रह की भांति दुखद भासती हैं। २५ स्वर्ग पाने पर उसे कुम्भीपाक नरक मानता है। २६ उस स्वर्ग से पृथक रहता है।

पृष्ट ८४। दुर्मिल छन्द की दूसरी पंक्ति।

बादल के फटने पर सूर्य दिखाई पड़ते हैं, वैसे ही ब्रह्माण्ड व्यापी विषय सुख के आवरण हटने पर ब्रह्म दृष्टि गोचर होते हैं।

पृष्ट १०। सब से नीचे की पंक्ति।

ब्रह्माण्ड रूपी गो के कन्धे तक एकपाद विभूति, अविद्या रूप नाशवान है।

पृष्ट ९३। पंक्ति ११॥

जब ब्रह्माजी की सभामें दक्ष प्रजापति और श्रीशिवजी में आपा-आपी हुई, तब नन्दीश्वरजी क्रोध के जोश में वेद ही को खाने लगे। अथर्वण को निगल चुके थे। शेष को ब्रह्माजी ने बचा लिया। वहीं नन्दीश्वर के हृदय में पहुँचकर अथर्वण को यह रहस्य वार्त्ता प्राप्त हुई।

* शुद्धा शुद्धि पत्र *

पृष्टांक	पंक्ति संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
५	१७	जा	जो
७	१४	सूय	सूर्य
८	" ६	भई	भई
९	७	लोफ	लोक
१०	२०	कार्पशय	कार्पण्य
१२	११	हा	हो
१२	२२	लेवें	लेवे
१३	१६	पपाहे	पपीहे
१४	८	घन	घन
१४	६	संघन	सघन
१५	१४	स	से
१७	२०	अपी	अपनी
२१	१६	जौइरी	जौहरी
२२	१४	नंत्र	मन्त्र
२३	१४	वक्त	वक्ता
२६	२१	कृषा	कृपा
२७	२०	कौ	की
३२	२३	चदन	चरण
३६	१८	मुन्दर	सुन्दर
३७	२३	अन्तद्दष्टि	अन्तर्द्दष्टि
३८	१६	वला	वाला
४५	६	की	का
५४	६७	आयेंगे	आगे
४६	१४	कामनाथ	कामतानाथ
७५	२४	को	के
८८	८	कूतांड़ भांड़	कूतांड भांड
८८	११	नतोञ्जलींदु	ततोञ्जलीन्दु
६०	११	प्रथिवी	पृथिवी
६४	७	कीट	कटी

15309
अयोध्या

* पद *

सब तजि अवधपुरी रहिये।
राम रूप हिये राम नाम मुख कर सेवा गहिये।
मज्जन पान सदा सरयू को सम दुख सुख सहिये॥
जहँतहँ रामचरित सुनिये नित सहज सुखहि लहिये
'रामचरण' रघुबीर कृपा ते कछु फल नहिं चहिये॥

[illegible]